P. R. No.: DL(S)-17/3082/2012-14
Rgn. No.: DELHIN/2000/2473
Date of Post : 27-28

SEVA-DHAM Plus
Since 1994
............The Wellness Center
(YOGA, AYURVEDA, NATUROPATHY & PHYSIOTHERAPY)

Relax Your Body, Mind & Soul In A Spiritual Environment

Truly rejuvenating treatment packages through
Relaxing Traditional Kerala Ayurvedic Therapies

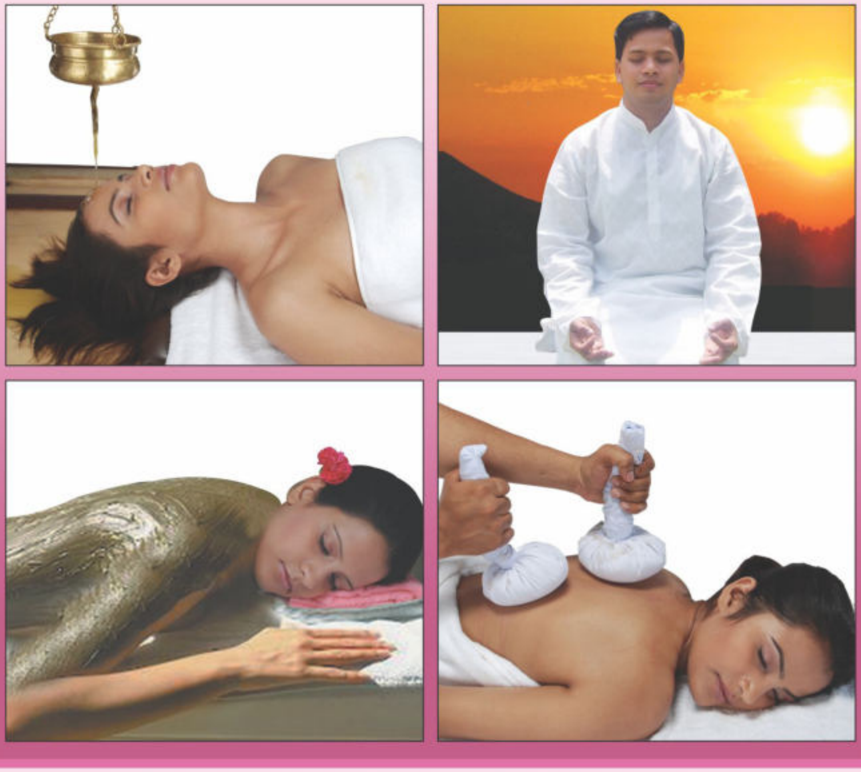

KH-57, Ring Road, (Behind Indian Oil Petrol Pump), Sarai Kale Khan, New Delhi - 110013
Ph. : +91-11-2632 0000, +91-11-2632 7911 Fax : +91-11-26821348 Mob. : +91-9868 99 0088, +91-9999 60 9878
Website : www.sevadham.info E-mail : contact@sevadham.info

प्रकाशक व मुद्रक : **श्री अरुण तिवारी,** मानव मंदिर मिशन ट्रष्ट (रजि.)
के.एच.–57 जैन आश्रम, रिंग रोड़, सराय काले खाँ, इंडियन ऑयल पेट्रोल पम्प के पीछे,
पो. बो.–3240, नई दिल्ली–110013, आई. जी. प्रिन्टर्स 104 (DSIDC) ओखला फेस–1
से मुद्रित।

संपादिका : श्रीमती निर्मला पुगलिया

कवर पेज सहित
36 पृष्ठ

मूल्य 5.00 रूपये
नवम्बर, 2013

रूपरेखा

जीवन मूल्यों की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

रूपरेखा

जीवन मूल्यों की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

वर्ष : 13 अंक : 11 नवम्बर, 2013

: मार्गदर्शन :
पूज्या प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री जी

: संयोजना :
साध्वी वसुमती
साध्वी पद्मश्री

: परामर्शक :
श्रीमती मंजुबाई जैन

: सम्पादक :
श्रीमती निर्मला पुगलिया

: व्यवस्थापक :
श्री अरूण तिवारी

वार्षिक शुल्क : 60 रुपये
आजीवन शुल्क : 1100 रुपये

: प्रकाशक :
मानव मंदिर मिशन ट्रस्ट (रजि.)
पोस्ट बॉक्स नं. : 3240
सराय काले खाँ बस टर्मिनल के
सामने, नई दिल्ली - 110013
फोन नं.: 26315530, 26821348
Website: www.rooprekha.com
E-mail: contact@manavmandir.info

इस अंक में

01. आर्ष-वाणी - 5
02. बोध-कथा - 5
03. शाश्वत स्वर - 6
04. गुरूदेव की कलम से - 7
05. चिंतन-चिरंतन - 15
06. लघु-कथा - 17
07. वास्तु-विज्ञान - 18
08. बेताल पच्चीसी-2 - 19
09. सच्चा गुरू कौन? - 21
10. नकली दिमाग से... - 22
11. दीवाली-पर्व - 23
12. बहादुर बेटियां - 26
13. लोक-कथा - 27
14. स्वास्थ्य - 30
15. बोलें-तारे - 31
16. समाचार दर्शन - 33
17. चुटकुले - 34

रूपरेखा-संरक्षक गण

श्री वीरेन्द्र भाई भारती बेन कोठारी, ह्युष्टन, अमेरिका
डॉ. प्रवीण नीरज जैन, सेन् फ्रेंसिस्को
डॉ. अंजना आशुतोष रस्तोगी, टेक्सास
डॉ. कैलाश सुनीता सिंघवी, न्यूयार्क
श्री शैलेश उर्वशी पटेल, सिनसिनाटी
श्री प्रमोद वीणा जवेरी, सिनसिनाटी
श्री महेन्द्र सिंह सुनील कुमार डागा, बैंकाक
श्री सुरेश सुरेखा आबड़, शिकागो
श्री नरसिंहदास विजय कुमार बंसल, लुधियाना
श्री कालू राम जतन लाल बरड़िया, सरदार शहर
श्री अमरनाथ शकुन्तला देवी, अहमदगढ़ वाले, बरेली
श्री कालूराम गुलाब चन्द बरड़िया, सूरत
श्री जयचन्द लाल चंपालाल सिंघी, सरदार शहर
श्री भंवरलाल उम्मेद सिंह शैलेन्द्र सुराना, दिल्ली
श्रीमती कमला बाई धर्मपत्नी स्व. श्री मांगेराम अग्रवाल, दिल्ली
श्री प्रेमचन्द ओमप्रकाश जैन उत्तमनगर, दिल्ली
श्रीमती मंगली देवी बुच्चा धर्मपत्नी स्व. शुभकरण बुच्चा, सूरत
श्री पी.के. जैन, लॉर्ड महावीरा स्कूल, नोएडा
श्री द्वारका प्रसाद पतराम, राजली वाले, हिसार
श्री हरबंसलाल ललित मोहन मित्तल, मोगा, पंजाब
श्री पुरुषोत्तमदास बाबा गोयल, सुनाम, पंजाब
श्री विनोद कुमार सुपुत्र श्री बीरबल दास सिंगला,
श्री अशोक कुमार सुनीता चोरड़िया, जयपुर
श्री सुरेश कुमार विनय कुमार अग्रवाल, चंडीगढ़
श्री देवकिशन मून्दडा विराटनगर नेपाल
श्री दिनेश नवीन बंसल सुपुत्र
श्री सीता राम बंसल (सीसवालिया) पंचकूला
श्री हरीश अलका सिंगला लुधियाना पंजाब
श्री केवल आशा जैन, टेम्पल, टेक्सास
श्री चैनरूप सुशील कुमार पारख, हनुमानगढ़
श्री श्यामलाल वीणादेवी सातरोदिया, हिसार
श्री उदयचन्द राजीव डागा, ह्युष्टन
श्री हेमेन्द्र, दक्षा पटेल न्यूजर्सी
श्री प्रवीण लता मेहत्ता ह्युष्टन
श्री अमृत किरण नाहटा, कनाडा
श्री गिरीश सुधा मेहता, बोस्टन
श्री राधेश्याम सावित्री देवी हिसार
श्री मनसुख भाई तारावेन मेहता, राजकोट
श्रीमती एवं श्री ओमप्रकाश बंसल, मुक्सर
डॉ. एस. आर. कांकरिया, मुम्बई
श्री कमलसिंह-विमलसिंह बैद, लाडनूं
श्रीमती स्वराज एरन, सुनाम
श्रीमती चंपाबाई भंसाली, जोधपुर
श्रीमती कमलेश रानी गोयल, फरीदाबाद
श्री जगजोत प्रसाद जैन कागजी, दिल्ली
डॉ. एस.पी. जैन अलका जैन, नोएडा
श्री राजकुमार कांतारानी गर्ग, अहमदगढ़
श्री प्रेम चंद जिया लाल जैन, उत्तमनगर
श्री देवराज सरोजबाला, हिसार
श्री राजेन्द्र कुमार केडिया, हिसार
श्री धर्मचन्द रवीन्द्र जैन, फतेहाबाद
श्री रमेश उषा जैन, नोएडा
श्री दयाचंद शशि जैन, नोएडा
श्री प्रेमचन्द रामनिवास जैन, मुआने वाले
श्री संपतराय दसानी, कोलकाता
लाला लाजपत राय, जिन्दल, संगरूर
श्री आदीश कुमार जी जैन, दिल्ली
मास्टर श्री बैजनाथ हरीप्रकाश जैन, हिसार
श्री केवल कृष्ण बंसल, पंचकूला
श्री सुरनेश कुमार सिंगला, सुनाम, पंजाब
श्री बुधमल राजकरण, तेजकरण सिंघी, सरदार शहर

आर्ष-वाणी

शैले-शैले न माणिक्यं, मौक्तिकं न गजे-गजे,
साधवो नहि सर्वत्र, चन्दनं न वने-वने।

-शास्त्र-वाक्य

हर पर्वत पर माणिक नहीं होता, हर हाथी के मस्तक में मोती नहीं होता, सब जगह असली साधु नहीं होते और हर वन में चन्दन नहीं होता।

बोध-कथा

बेड़ियों के बीच

किसी शहर में एक लुहार रहता था। वह अपना काम ईमानदारी और मेहनत से करता था। कुछ ही समय में उसने अपना एक चिह्न बना लिया। अब वह लोहे की कोई भी वस्तु बनाते समय उसमें अपना चिह्न अवश्य बनाता था। धीरे-धीरे वह काफी सम्पन्न हो गया। उसका व्यापार भी काफी बढ़ गया था। एक दिन चोरों ने उसके घर पर धावा बोला और उसे लोहे की बेड़ियों में जकड़ कर अंधेरी रात में कुएं के अंदर फैंक दिया। लुहार पूरी रात उस कुएं से निकलने के लिए संघर्ष करता रहा लेकिन असफल रहा। दिन निकलने पर कुएं में सूर्य की किरणें पहुंचीं। अचानक लुहार की नजर अपने हाथों में बंधी लोहे की बेड़ियों पर पड़ी तो वह यह देखकर दंग रह गया कि वह बेड़ियां उसी के द्वारा बनाई हुई थीं। उसमें उसका चिह्न भी लगा हुआ था। लुहार को मालूम था कि उसके द्वारा बनाई हुई हर वस्तु मजबूत होती है। उसने उस बेड़ी को खोलने के अनेक प्रयास किए। फिर उसने सोचा कि जब वह अपनी कुशलता और मेहनत से मजबूत बेड़ी बना सकता है तो वह उसी कुशलता और मेहनत का प्रयोग कर उस बेड़ी से अपने हाथों को मुक्त भी कर सकता है। उसने कुएं में अपना सारा अनुभव, शक्ति और बुद्धि उस बेड़ी को खोलने में लगा दी। उसे याद आया कि लोहा, लोहे को काटता है। यह देखकर उसने बेड़ियों को आपस में जोर-जोर से रगड़ना शुरू कर दिया। वह थक गया लेकिन उसने उन बेड़ियों को रगड़ना जारी रखा। आखिर काफी देर बाद उसकी मेहनत रंग लाई और बेड़ी तेज रगड़ से खुल कर एक ओर गिर गई। यह देखकर लुहार अपनी बुद्धि और कुशलता पर अत्यंत खुश हुआ और उस कुएं से बाहर आ गया। बाहर आकर उसने जान लिया कि उसकी योग्यता, कुशलता और मेहनत ने ही उसे मुसीबत से बाहर निकाला है। वह और भी ज्यादा मेहनत से काम करने लगा।

शाश्वत स्वर

कंगन और चूड़ियों के सहजीवन से भी सीख लें

एक दिन एक महिला ने अपने घर के बाहर तीन संतों को देखा। भीतर आ कर उसने यह बात अपने पति को बताई। पति ने कहा- 'उनको आदर सहित बुला लाओ। महिला ने बाहर आ कर उन संतों को आमंत्रित किया। संत बोले, हम सब किसी भी घर में एक साथ नहीं जाते। पर क्यों? महिला ने पूछा।

उनमें से एक ने कहा, मेरा नाम धन है। फिर दूसरे संतों की ओर इशारा कर के कहा, इन दोनों के नाम सफलता और प्रेम हैं। हममें से कोई एक ही भीतर आ सकता है। आप तय कर लें कि किसे निमंत्रित करना है।

महिला असमंजस में पड़ गई। फिर भीतर जाकर अपने पति को बताया। पति प्रसन्न हो कर बोला, हमें धन को आमंत्रित करना चाहिए। हमारा घर खुशियों से भर जाएगा। पत्नी ने कहा, मुझे लगता है कि हमें सफलता को आमंत्रित करना चाहिए। सफलता के साथ धन भी जुड़ा होता है। उनकी बेटी यह सब सुन रही थी, मुझे लगता है कि हमें प्रेम को ही आमंत्रित करना चाहिए। प्रेम से बढ़ कर कुछ भी नहीं है।

कुछ सोच-विचार के बाद माता-पिता ने उसकी बात मान ली। महिला बाहर गई और पूछा, आप में से जिनका नाम प्रेम है वे कृपया घर में चलें और भोजन ग्रहण करें। प्रेम घर की ओर बढ़ चले। बाकी के दो संत भी उनके पीछे-पीछे चलने लगे। महिला ने आश्चर्य से कहा, पहले तो कहा कि आपमें से कोई एक ही भीतर आ सकता है। और जब मैं ने सिर्फ प्रेम को ही आमंत्रित किया, तो आप दोनों भी साथ आ रहे हैं। तब उनमें से एक बोला, यदि आपने धन और सफलता में से किसी एक को आमंत्रित किया होता तो केवल वही भीतर जाता। लेकिन आपने प्रेम को आमंत्रित किया है। प्रेम कभी अकेला नहीं जाता। वह जहां-जहां जाता है, हम दोनों यानी धन और सफलता उसके पीछे-पीछे जाते हैं। आज की भोगवादी संस्कृति ने इन लोक कथाओं को अर्थहीन बना दिया है। संचार के साधन बहुत विकसित हुए हैं, किंतु आपसी बोल-चाल में प्रेम की मिठास न जाने कहां लुप्त होती जा रही है। हर कोई माथे पर बल डाले या मुंह लटकाए मिलता है। हंसते भी हैं तो बनावटी हंसी। पश्चिम की नकल ने जिस नए मध्य वर्ग को जन्म दिया है, वह आगे बढ़ने सफल होने और धन के पीछे भागने की चाह में अपनी जड़ों से कटता जा रहा है। इसी ने उसकी स्वाभाविकता छीन ली है।

-प्रस्तुति : निर्मला पुगलिया

गुरुदेव की कलम से

महावीर का अपरिग्रह दर्शन

मूर्छा परिग्रह का आत्मपक्ष है। शोषण, वैषम्य और अन्याय उसका लोकपक्ष है। उससे समग्र लोकजीवन उत्पीड़ित होता है। महावीर कहते हैं- लोकपीड़ा वस्तुतः आत्म-पीड़ा है और तत्त्वतः आत्मपीड़ा लोक-पीड़ा ही है। लोक और आत्मा के मध्य विभाजक रेखा खींचना सम्भव नहीं है। “जो लोक का अपलाप करता है वह अपना ही अपलाप करता है, जो अपना अपलाप करता है वह लोक का अपलाप भी करता है।” “जो लोक की आशातना करता है वह अपनी ही आशातना करता है। जो अपनी आशातना करता है वह लोक की आशातना करता है।”

व्यक्ति और समाज अभिन्न

मानव एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज से जुड़ा है जन्म से मरण तक। उसकी व्यक्तिमूलक सत्ता भी समाज के ही सन्दर्भ में है। समाज की अपनी सत्ता भी उसके ही सन्दर्भ में है। क्योंकि उसकी समष्टि ही समाज है। समाज से मुक्त वही है जो अपने व्यक्ति से ही मुक्त हो गया, जिसका कुछ व्यक्तिगत रहा ही नहीं, जिसकी व्यक्तिमूलक सत्ता नहीं रही। अतः समाज के साथ व्यक्ति का आदान-प्रदानमूलक सम्बन्ध अनिवार्यतः रहता ही है। इस स्थिति में अगर वह समाज के अहित का कारण बनता है तो वस्तुतः अपने ही अहित का निमित्त बनता है क्योंकि समाज तो अभी व्यष्टि का ही सामवाय है और हर व्यष्टि उसमें घुल-मिलकर एक हो गयी है। समष्टि अगर पीड़ित है तो व्यष्टि उस पीड़ा को अप्रत्यक्ष भोगती है किसी न किसी रूप में। समाज अगर टूटता है, तो व्यक्ति टूटता है, किसी न किसी रूप में। व्यक्ति का विराट् रूप समाज है। उसका कोई भी खण्ड टूटता है तो दरअसल व्यक्ति ही टूट रहा है।

दधीचि ऋषि की अस्थियां मांगकर इन्द्र ने वज्र बनाया। दधीचि ने समष्टि-हित के लिए देह-त्याग किया ताकि उनकी अस्थियां इन्द्र को मिल सकें। ऐसा एक वैदिक उपाख्यान है। दधीचि के पौत्र ने अपनी मां से यह घटना सुनी। बड़ा कुपित हुआ कि देवों ने अपने हित के लिए उसके दादा का जीवन अकाल-निःशेष करवाया, वृत्रासुर को मारने के लिए उनकी अस्थियां प्राप्त कर बज्र बनाया। उसने कुपित होकर देवों का विनाश करने की ठान ली। तपस्या कर संहार के देवता शिव को प्रसन्न किया। वरदान मांगा-‘सारे देवता जल जांए।’ शिव ने कहा-‘वरदान देता हूं, लेकिन विकल्प के साथ। विकल्प यह कि जब तुम चाहोगें, संकल्प मात्र से इसे निष्फल कर सकोगे।’ उनके ‘तथास्तु’ कहकर अदृश्य होने के साथ ही उसके रोम-रोम में आग लग गयी। तड़पने लगा वह; दौड़ने लगा वह व्याकुल होकर दुःसह मरण-वेदना से। बाध्य होकर शिव को फिर पुकारा। शिव ने कहा-देवता जल रहे है। देवता तुम्हारे भीतर हीं है, वे जल रहे है। इसका अर्थ है कि तुम जल कर मर जाओगें। तुमसे अलग देवता कहां है। देवता या दानव जो भी है, तुम ही हो। कोई भी जलेगा तो तुम्हीं जलोगें। उसने संकल्प किया कि यह वरदान निरस्त हो जाए। कोई नहीं जले। ज्वाला बुझ गयी, भीतर-बाहर सर्वत्र।

कहानी काल्पनिक हो सकती है। कहानी प्रायः काल्पनिक होती ही है। उसका अर्थ सत्य होता है। जीवन का एक महान् सत्य यहां साकार हुआ है। किसी की पीड़ा हमारी पीड़ा है, किसी का भी विनाश हमारा विनाश है।

संग्रह जन्मदाता है शोषण का

अतः जीवन का सही मार्ग है इस प्रकार जीना कि उससे किसी का शोषण न हो, पीड़न न हो, किसी का अपलाप न हो, किसी की आशातना न हो। परिग्रह का लोक-पक्ष संग्रह है और जन्मदाता है शोषण का, गरीबी का, भूख का। अतः महावीर परिग्रह के लोक-पक्ष के निरसन की भी मर्यादा निरूपित करते हैं। यह प्ररूपण दो स्तरों पर है। साधु-साध्वी तो अनगार हैं अर्थात् उनका अपना आवास भी नहीं, वस्त्र भी नहीं, शरीर भी नहीं। अपना कुछ भी नहीं। वे भिक्षाजीवी होते हैं। संग्रह का प्रश्न ही नहीं उठता, जहां उपार्जन ही नहीं है। गृहस्थ सामाजिक जीवन जीता है। उसके लिए अर्थ का उपार्जन आवश्यक है। जीवन-साधनों का संचय आवश्यक है। उसे इस प्रकार उपार्जित किया जाए कि किसी का उत्पीड़न न हो तथा आवश्यकतानुसार ही उपयोग किया जाए। उसके प्रति स्वामित्व की भावना कदापि न रहे। दूसरे के भाग का अपहरण न हो, इसकी जागरूकता रहे और इसके लिए यथा संभव त्याग भी किया जाऐ। यह महावीर का गृहस्थ जीवन के सन्दर्भ में अपरिग्रहमूलक आदर्श है जिसकी व्रतों द्वारा निश्चित सीमांए बांध दी गयी है- संग्रह के दो पक्ष हैं, उपार्जन पक्ष और उपयोग पक्ष। प्रथम उपार्जन पक्ष है। इस दृष्टि से अनेक व्यवसायों को महावीर ने अतिचार माना है और उन्हें एकदम छोड़ देने की प्रेरणा दी है। ‘इंगालकम्मे’ अर्थात् जंगल आदि को खेती योग्य जमीन तैयार करने के लिए जला देना। ‘वणकम्मे’ अर्थात् लकड़ी आदि के लिए जंगलों को कटवा देना। आज हमें इस बात

का महत्व कुछ समझ में आ रहा है कि जंगलों की कितनी उपादेयता होती है, पेड़ों को काटने पर रोक लगायी जाती है, वन-महोत्सव द्वारा पेड़ लगाये जा रहे हैं। प्रथम दो अतिचार इसी सन्दर्भ में हैं। इसके आगे महावीर उन व्यवसायों का भी विसर्जन करते हैं जिनमें दूसरे प्राणियों को हानि हो। रेशम के व्यवसाय में कीड़े मरते है, राल या लाख के निर्माण में भी कीड़ों का निमंम संहार होता है, अतः महावीर ने इन्हें अतिचार माना है पशुओं पर अधिक भार लादना भी अतिचार है। सर्वत्र यह दृष्टि रही है कि किसी भी जीव का शोषण न हो, कीड़े मात्र का भी, पशु का भी। पोषण के बदले श्रम लिये जाने वाले पशुओं से भी अवांछित श्रम लेना अतिचार है। पशु जहां पानी पीते हों उस स्थान को कृत्रिम उपायों से सुखाकर काम में लेना भी अतिचार है। नटी-वेश्या आदि को संरक्षण देकर उनकी आय का संग्रह करना भी महावीर विवर्जित करते है। इसके अन्तर्गत आज के विशाल होटलों का भी समावेश होता है जहां पैसों की कीमत पर सेक्स का मनमाना व्यापार होता है। महावीर इसे अतिचार मानते है। इन व्यवसायों के वर्जन के बाद व्यावहारिक स्तर पर व्यावसायिक प्रक्रियाओं में समाविष्ट होने वाली अनैतिकताओं को भी उन्होंने वर्जित किया है। कूटतौल-कूटमाप अर्थात् देते समय कम तौलना या मापना अतिचार है, लेते समय अधिक तौलना या मापना अतिचार है। तस्कर-व्यापार या 'स्मगलिंग' का महावीर ने स्पष्ट निषेध किया है। राजकीय कानूनों के विपरीत हर प्रकार के व्यवसायों को, छिपे हुए आय-स्रोतों को उन्होंने अतिचार माना है। हर प्रकार की अनैतिकता, चाहे वह माल को छिपाकर कालेबाजार में बेचना हो, एकाधिकार -मोनोपॉली द्वारा दूसरों को गिराना हो, आय का गलत हिसाब रखना हो उन सबको जिसमें लुकाव-छिपाव है, अप्रामाणिकता है, महावीर अतिचार मानते हैं और उनका विसर्जन करते हैं। महावीर के अनुसार चलने वाला श्रावक न जमाखोरी कर सकता है, न दो नम्बर के खाते रखकर करों की चोरी कर सकता है, न काला-बाजारी कर सकता है, न छल-प्रपंच से प्रतियोगिता से दूसरे व्यवसायियों को गिरा सकता है, न मानव या पशु का किसी प्रकार से शोषण कर सकता है।

संग्रह का मूल है इच्छा

दूसरा पक्ष है-इच्छा-परिमाण। संग्रह का मूल इच्छा है। इच्छा आवश्यकता से अलग चीज़ होती है। आवश्यकता है शरीर की और इच्छा है मन की। आवश्यकता है पौष्टिक आहार, ग्रीष्म-शीत से बचाने के योग्यवस्त्र तथा हवा-पानी से युक्त आवास। आवश्यकता का परिमाण नहीं हो सकता। वह अपने आप में न्यूनतम ही होती है। आवश्यकता शरीर की है। साधु-साध्वियों को भी आवश्यकता-पूर्ति करनी पड़ती है। यह परिग्रह नहीं हैं।

जं पि वंत्थ च पायं वा कंबलं पाय पुंछणं।
तं पि संजम लज्जट्ठा धारेन्ति परिहरन्तिय।।
न सो परिग्गहो वुत्तो.....।

जो वस्त्र, पात्र, कम्बल आदि साधन हैं वे मात्र संयम जीवन धारण करने के लिए है। वे अनिवार्य हैं। परिमाण करने का विषय है इच्छाएं जो अबाध छोड़ने पर कभी तृप्त होती ही नहीं। महावीर के शब्दों में-

सुवण्ण रूवस्स उ पव्वया भवे, सिया हु केलाससमा असंखया।
नरस्स लुद्धस्स न तेहि किंचि इच्छा हु आगाससमा अणंतया।।

''कैलाश पर्वत जितने बड़े सोने-चांदी के अगणित ढेर हों, तो भी लोभी मानव का मन उनसे संतुष्ट नहीं होता, क्योंकि इच्छाएं आकाश की तरह अनन्त हैं'' इच्छाओं का अनिरेक्य ही संग्रह, शोषण, विषमता और हर प्रकार की अप्रामाणिकता का हेतु बनता है। अगणित व्यक्तियों को विपन्न कर जीवन-साधनों की उपलब्धि के लिए अनैतिक बनने को बाध्य करता है, भारत की वर्तमान स्थिति को देखा जाए तो सारा दृश्य अमर्यादित इच्छाओं की कुत्सा को प्रतिबिम्बित करता है। अतः महावीर प्रारम्भ में ही इच्छा-परिमाण-व्रत तथा अतिचार-विवर्जन द्वारा अर्जन को मर्यादित करने का मार्ग निरूपित करते हैं।

इच्छा-परिमाण के साथ-साथ महावीर ने दिशा-परिमाण का भी विधान दिया। दिशा-परिमाण का सीधा-साधा अर्थ है कि व्यक्ति अपनी आर्थिक-व्यावसायिक गतिविधियों के लिए क्षेत्रीय सीमा बांध ले और उसका अतिक्रमण न करे। साधारणतः व्यक्ति जब क्षेत्रीय सीमाओं को तोड़कर दूसरे क्षेत्रों मे जा बसता है और वहां के पूर्व-स्थापित व्यावसायिक ढांचे को तितर-बितर कर अपने को प्रतिष्ठापित करता है, प्रतिस्पर्धा में उतरकर दूसरों को विस्थापित कर देता है, उससे शोषण और संघर्ष के नये आयाम खुल जाते हैं। उसके अपने क्षेत्र को उससे कोई लाभ नहीं होता। विशाल पैमाने पर यान्त्रिक उद्योगों का विकास होता है जिनका जमाव बड़े नगरों में होने से भीड़-भाड़, गन्दी बस्तियां, गांवों से आए मजदूरों के लिए व्यसन-पीड़ित जीवन का स्रोत बनता है। गांवों की क्षेत्रीय स्वायत्तता तथा स्वावलम्बन समाप्त हो जाने से वे शहरों के मुखापेक्षी बन जाते हैं। आज सर्वत्र यह हो रहा है। शहर बेकारों से भरे हैं तथा गांवों में खेत वीरान पड़े हैं। महावीर के दिशा-परिमाण-व्रत से इस असन्तुलन का निरसन स्वयं हो जाता है।

दिशा-परिमाण का प्रयोग

यह एक मिथ्या धारणा है कि क्षेत्रीय सीमाधिकरण से कुटीर और गृह-उद्योगों पर आधारित

अर्थ-व्यवस्था आदिम स्तर की होगी। मूलतः ऐसा नहीं है। जापान की औद्योगिक प्रगति एशिया के लिए ही नहीं, सारे विश्व के लिए एक चुनौती है। भूगोलवेत्ता जानते हैं कि वहां कच्चा माल नहीं मिलता। उन्हें बाहर से मंगाना पड़ता है। भूकम्पों के निरन्तर आगमन के कारण औसत भवन छोटे और एक तल्ले के ही होते हैं, कुछ महानगरों को छोड़कर, जैसे टोकियों भूमि कृषियोग्य कम है, अतः अनाज भी प्रायः बाहर से मंगाना पड़ता है। फिर भी वह देश इतनी तीव्र प्रगति कर रहा है कि अमेरिका के अर्थशास्त्री हर्मन कीन का कहना है 'इस शताब्दी के अन्त तक जापान विश्व का सबसे धनी और ताकतवर देश होगा।" अमेरिका को वह 1985 में ही पीछे छोड़ देगा। यह सब अकल्पनीय-सा लगता है, जबकि हम यह देखते हैं कि वहां कच्चा माल पैदा नहीं होता, कृषि-पैदावार नगण्य होती है। बाहर से कच्चा माल मंगाकर उसे श्रम एंव तकनीक के द्वारा तैयार माल में बदलना और उन्हीं देशों में बेचना, यही आधार है वहां की अर्थ-व्यवस्था का भारत के दक्षिण-पूर्वी भाग में मोनोजाइट रेत में यूरेनियम की भारी मात्रा है लेकिन उसे यहां निकाला नहीं जा सकता। जापान भेजा जाता है जहां तकनीक एवं श्रम के बल पर वे यूरेनियम निकालते हैं। यूरेनियम संसार की सबसे महंगी धातु है। परमाणु-ऊर्जा के लिए उसी का सर्वाधिक उपयोग होता है। वहां वह प्राप्य नहीं होने पर भी यहां से कच्चा माल उपलब्ध कर प्राप्त करली जाती है और यहां उपलब्ध होने पर भी उसका कोई लाभ नहीं उठाया जाता।

गांधीजी ने लघु एवं कुटीर उद्योग की बात कही। इसका अर्थ भारी यन्त्रों एवं कल-कारखानों द्वारा उत्पादन के केन्द्रीकरण से बचाव था, मशीन या किसी भी तकनीक का परिवर्जन नहीं। आधुनिक विज्ञान की खोजों, तकनीकी उपलब्धियों का उपयोग लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास तथा परिष्कार में किया जा सकता था। गांधीजी की यह परिकल्पना थी कि गांव-गांव में बिजली पहुंचे, 'ट्यूब वेल' हर खेत में हो, नहरों का जाल सर्वत्र बिछे, छोटी-छोटी मशीनों का घर-घर में प्रयोग हो। लेकिन पश्चिमी संस्कारों में पली-पुसी पीढ़ी ने उनके चरखें को स्थूल आदिम प्रतीक समझा एक अर्द्ध-साम्य अर्थ-व्यवस्था का और विमुख रहे उसकी मूल प्रेरणा से। अतः दूसरा रास्ता चुना जो इस जनसंख्या-बहुल देश के लिए बेकारी, भूखमरी, विषमता, शोषण एवं मानवीय श्रम के अवमूल्यन तथा अनुपयोग का स्रोत सिद्ध हुआ। भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री वी.वी. गिरि ने अपनी एक सद्यः प्रकाशित पुस्तक 'जॉब्स' फॉर द मिलियन्स' (करोड़ों के लिए रोजगार) में यही लिखा है कि लघु एवं कुटीर उद्योगों के परिष्कार तथा विकास और कृषि की उन्नति एवं विस्तार से ही बेरोज़गारी तथा विपन्नता का प्रतिकार किया जा सकता है जो गांधी जी का आदर्श था।

श्री अरविन्द भाई मफतलाल ने इस दिशा में एक प्रयोग किया है जो भावी दिशाओं की ओर एक संकेत हैं। उन्होंने अपने बम्बई-स्थित कारखानों के मजदूरों के मूल स्थानों की जानकारी एकत्रित की और पाया कि वे एक विशेष भूभाग के गांवों के अधिवासी थे। उन्होंने उनको पुनः अपने गांवों में बसा दिया, घर पर ही काम कुटीर-उद्योगों के स्तर पर व्यवस्थित रूप से बांट दिया और कारखाने का कार्य केवल संयोजन एवं परिष्करण तक ही रखा। पाया गया कि इससे उत्पादन बढ गया, काम अच्छा हुआ, मज़दूरों की आर्थिक स्थिति सुधारी, शहरी जीवन में गृहीत्त व्यसन एवं बुराइयां छूटीं और सरल, सादा तथा सुखी जीवन बना। महावीर के दिशा-परिमाण-व्रत से यह सब कुछ स्वयं मूर्त हो जाता है।

उपभोग-परिभोग-परिमाण-व्रत

उसके बाद उपभोग-परिभोग-परिमाण-व्रत है। अतिचारों से अलग प्रामाणिकतापर्वूक, शोषण-मुक्त तरीकों से उपार्जित अर्थ भी उतना ही उपयोग में आए जितना जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं के लिए अपेक्षित हो। शेष विसर्जित कर दिया जाए-उनके लिए जो अर्जन के सहयोगी रहे हैं। ताकि उनको उचित हिस्सा मिल सकें। उपभोग-परिमाण-व्रत एक प्रकार का स्वैच्छिक सीमाधिकरण है- 'वालेण्टरी सीलिंग, 'जिसमें सबको आवश्यकतानुरूप जीवन-साधन स्वयं उपलब्ध होते हैं। यह किसी का दूसरे पर उपकार नहीं है। जो व्यक्ति अनिवार्य आवश्यकताओ से अधिक अर्थ का संग्रह एवं उपयोग करता है वह दूसरों को उनके आवश्यक जीवन-साधनों से वंचित करता है। महावीर के शब्दों में वह 'स्तेय' (चोरी) करता है, अदत्तादान ग्रहण करता है, अर्थात् वह जो उसे नहीं दिया गया उसे उसने छल-बल से लिया है। इच्छापरिमाण भाव-पक्ष है, उपार्जन के लक्ष्य को सीमित करता है तथा उपभोग-परिमाण-व्रत इसी का कर्म पक्ष है जो उपलब्ध आय का उपयोग सीमित करता हैं दोनों व्रत एक-दूसरे के पूर्वोत्तर पक्ष मात्र हैं। एक के अभाव में दूसरे का पालन बहुत कठिन है। उपभोग-परिभोग-परिमाण-व्रत के अन्तर्गत सहज-सादा जीवन-यापन करते हुए जो धन बच जाता है, उसे विसर्जित करना है। वह स्वाभाविकतया वितरित हो जाता है उनमें जो अर्थ-उपार्जन-पक्ष से जुड़े हैं। अकेला व्यक्ति तो व्यावसायिक उत्पादन और क्रय-विक्रय कर नहीं सकता। सबका श्रम ही परिणमित होता है हर आर्थिक उपलब्धि में, अतः वह एक व्यक्ति की नहीं, सबकी है। बाजार-भावों से श्रम की कीमत नहीं आंकी जा सकती। बाजार-दर पर वेतन देकर यह नहीं समझा जा सकता कि शेष सब किसी व्यक्ति का है। स्वामित्व किसी का भी नहीं, वह सबका है। उसका उपयोग अपनी आवश्यकतानुसार करते हुए शेष उनको लौटा देना आवश्यक है जो उसके उपार्जन में सहभागी हैं, क्योंकि बहुलांश उन्हीं का है।

विसर्जन का यह सूत्र अगर महावीर के अनुयायियों ने कम से कम अपने जीवन में अपनाया होता तो राष्ट्रीय समाज में एक रक्तहीन समाजवादी क्रान्ति कभी की हो चुकती, देश का सारा सामाजिक-आर्थिक ढांचा ही बदल जाता और यह समाज भारत का ही नहीं अपितु एशिया कासबसे प्रगतिशील और तेजस्वी, सुखी और समृद्ध समाज होता। उस अर्थ-व्यवस्था में जो उपभोग-परिभोग-परिमाण-व्रत तथा विसर्जन जो अपने जीवन में साकार करती है, शोषण, विषमता, भ्रष्टाचार और संग्रह हो नहीं सकता। इसके परिणाम स्वरूप हड़ताल भी नहीं हो सकती। काला बाजारी, कर-चोरी, तस्कर-व्यापार, कूटतौल-कूटमाप, किसी भी प्रकार की अप्रामाणिकता इसमें कल्पनातीत बात होती।

स्वामित्व विसर्जन के प्रयोग

जापान में मित्सुई और मित्सुविसी सबसे बड़ी कम्पनियां है। वहां के प्रबन्धकों ने मज़दूरों के लिए आवासगृह अपनी ओर से बनवाए है कम्पनी के भवन का ही एक भाग गुलाबी रंग का है जिसमें आराम और आमोद-प्रमोद के सारे साधन हैं। वह नवविवाहित कर्मचारी के रहने के लिए है जहां वह खुशी से अपने वैवाहिक जीवन के प्रथम छह मास बिता सके। उसके बाद वह सामान्य आवास-केन्द्र में चला जाता है जो हर कर्मचारी को उपलब्ध है। कम्पनी का अपना बाजार है जहां नियत एंव नियन्त्रित कीमत पर दैनन्दिन आवश्यकताओं का सामान बिकता है। उसका प्रबन्ध भी कर्मचारियों द्वारा होता है। कम्पनी का अपना बैंक भी है। जहां दूसरे बैंकों से अधिक ऊंची ब्याज पर कर्मचारी का रूपया जमा रखा जाता है। वह धन कम्पनी के काम आता है, कर्मचारी को ऊंचा ब्याज मिलता है, जो दोनों के लिए हितकर है।

एक बार मित्सुविसी कम्पनी के निदेशकों की बैठक में प्रस्ताव रखा गया कि कर्मचारियों को जो दोपहर में नाश्ते का डेढ़ घंटे का विश्राम-काल मिलता है उसे कम कर दिया जाए तो पांच आदमी द्वारा उतना काम हो सकता है जितना आठ आदमी करते हैं। अर्थ-विशेषज्ञ की इस सिफारिश को मानने से वहां के निदेशकों ने सर्व-सम्पति से इनकार कर दिया। जब कर्मचारियों को यह सूचना मिली तो वे इतने प्रसन्न हुए कि छुट्टी के समय में काम करके उन्होंने कुछ उत्पादन दुगुना कर दिया जिसकी अर्थ-विशेषज्ञ को कल्पना तक न थी। भारतीय उद्योगपतियों के लिए यह अकल्पनीय है। यह कारण है कि आये दिन हड़ताले होती रहती हैं, घेराव और तालाबन्दियां होती है। जापान में अब तक केवल एक हड़ताल हुई है जो इक्कीस दिनों तक चली। वह वहां के राष्ट्रीय श्रम-संस्थान द्वारा आयोजित थी और उसका लक्ष्य राजनीतिक था, आर्थिक नहीं। ये सब स्वामित्व-विसर्जन के उदाहरण हैं जिसका सूत्र महावीर ने अपनी आर्थिक परिकल्पना में दिया है। उन्होंने सरल शब्दों में कहा कि दूसरों की विपन्नता पर विलास के प्रासाद खड़े करना हिंसक विप्लवों की अटूट श्रृखंला को आमन्त्रित करना है जिसे भारतीय समाज, और उसके अंग रूप में जैन समाज भी करता आ रहा है। सामाजिक दायित्वों की उपेक्षा करने व्यवसाय-तन्त्र अपने को खतरे में डालता ही है, पूरे देश को भी हिंसा के गर्त में घसीटकर ले जाता है।

इन सब व्रतो में सर्वत्र व्याप्त है अपरिग्रह-दर्शन। भावना के स्तर पर वह ममत्व का विसर्जन है और लोकजीवन में व्यवस्था के स्तर पर स्वामित्व का विसर्जन। महावीर-प्रणीत अर्थ-व्यवस्था में व्यक्तिगत स्वामित्व (प्राइवेट ओनर-शिप) के लिए कोई स्थान नहीं है। मार्क्स स्वामित्व को एक वर्ग से छीनकर दूसरे वर्ग को देने की बात सोचता है किन्तु महावीर स्वामित्व का सम्पूर्णतः उन्मूलन स्वस्थ आर्थिक-सामाजिक जीवन-व्यवस्था के लिए आवश्यक मानते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि व्यक्ति अर्थ-तन्त्र से बाहर निकलकर खड़ा हो जाए, संसार छोड़कर निकल जाए, श्रामण्य पर्याय ग्रहण कर ले जो न प्रत्येक व्यक्ति के लिए सम्भव है, न व्यवहार्य ही। इसका अर्थ इतना ही है कि व्यक्ति अपनी सम्पूर्ण क्षमता और ज्ञान का नियोजन कर प्राप्त अर्जन में से अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उसमें से उपयोग करे और शेष विसर्जित कर दे। इन सबसे ऊपर की बात यह है कि स्वामित्व की भावना न इसमें रखे जिसका उपभोग-परिभोग कर रहा है न उसमें जिसका विसर्जन कर रहा है। वह स्वामी नही है, मात्र सेवक है, मात्र प्रहरी है समाज का। गांधी जी की 'ट्रस्टीशिप' की परिकल्पना भी यही थी कि व्यक्ति अपने को समाज की सम्पति का ट्रस्टी समझे। यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने 'रिपब्लिक' में स्वामित्वमुक्त आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था का एक आदर्श चित्र उपस्थित किया है जो महावीर के परिग्रह-सूत्र के समकक्ष है।

किन्तु एक बल उसके भी ऊपर होता है,
शेषनाग की शैय्या पर ही वह सोता है,
जब जागा वह कृष्ण, बुद्ध महावीर रूप ले,
नयी क्रान्ति का बीज धरा पर वह बोता है।

-आचार्यश्री रूपचन्द्र

साधना के नाम पर पलने वाले भ्रम

○ संघ प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री

मैं स्तब्ध हूं, यह देखकर कि एक समझदार व्यक्ति भुज-बल से सागर को तैरने की कोशिश में है। दूसरे व्यक्ति में उतना दुस्साहस नहीं है। वह एक रबर के टायर का आलम्बन लेकर समुद्र का अन्त पाना चाहता है।

तीसरा व्यक्ति कुछ संभला हुआ है। वह एक साधारण-सी नौका लिये उस पार जाने का प्रयास कर रहा है।

प्रथम व्यक्ति का डूबना निश्चित था। वह अशान्त भाव से जितना चल सका, उतना बधाई का पात्र। दूसरा व्यक्ति मुश्किल से मील-भर चला होगा कि आ गया किसी मच्छ की पकड़ में। तीसरा व्यक्ति सागर की उत्तुंग तरंगों पर जिस मस्ती से अठखेलियां कर रहा था, उसी मस्ती से तूफान ने उसे अपने में समेट लिया।

मुझे लगा, मंजिल के लिए अकसर निकलने वाले का यही हाल होता है। मंजिल तक पहुंचने वाले कितने हैं।

एक युवक संन्यासी बना। पता नहीं भावादेश में या जीवन से ऊबकर, उसने घर छोड़ दिया। मुक्ति की अपेक्षा बन्धन और सघन हो गया। जो ममत्व एक परिवार में सिमटा हुआ था, अब पूरे अनुयायी वर्ग पर और आश्रम के पशु-पक्षियों पर हो गया। जो आसक्ति अपनी निजी सम्पत्ति पर थी, अब स्थान-स्थान के मठ-मन्दिर बपौती बन गए। जो आग्रह अपनी बात पर था, अब पूरे सिद्धान्तों, मान्यताओं और परम्पराओं के जाल में उलझ गया। जो ईर्ष्या व जलन अपने आस-पास के व्यक्तियों पर होती थी, अब दुनिया-भर के धर्म-सम्प्रदायों के प्रति उग्र हो गई। जो समय का अपव्यय पर के गोरखधंधों में होता था, अब सुबह से शाम हो जाती, साधना के नाना प्रारूपों में।

रात्रि के तीन बजे चांदी की लकीर-सा सुन्दर चांद वृक्ष की ओट में झिल-मिला रहा था। इतने में एक धर्म-जागृत व्यक्ति ने करवट ली और चांद की ओर नजर घुमाई। उसका मन उचट गया। चांद की क्षणिक सुषमा से अधिक जीवन की सुषमा का क्या विश्वास किया जा सकता है। वह निकल पड़ा घर से निर्जन जंगल की ओर। बहुत तप तपा, शरीर को लकड़ी-सा कृश कर लिया, पर मंजिल नहीं मिली। जो अहंभाव अपने वैभव, सत्ता और शक्ति पर था, अब वह ज्ञान और साधना पर मंडराने लगा और उसी के पोषण में उसे रस आने लगा।

संसार की असारता ने किसी को मुनि बनने की प्रेरणा दी। मुनि बनने के बाद जो कुछ होता है, वह मुक्ति के लिए होता है। मुनि संग्रह करे, वह भी मुक्ति के लिए। दम्भ करे वह भी साधना का अंग। कहीं ममत्व हो वह धर्मानुराग। गुस्सा करे वह भी अनुशासन की दृढ़ता। अभिमान करे वह भी हीन भाव को विषयान्तरित करने के लिए। कलह करे वह भी धर्म की सुरक्षा के लिए। ईर्ष्या और प्रतिस्पर्धा करे वह भी कुछ न कुछ श्रेष्ठता की आड़ में रख ली जाती है। साधना की ओट में होने वाली समग्र अच्छी-बुरी क्रियाएं सम्यक् मानी जाती है।

मुनि ने वर्षों साधना की। मंजिल को पाना तो दूर, पहचान भी नहीं सका।

साधना वेश में नहीं है। साधना क्रियाकाण्डों में भी नहीं है। साधना दिखावे के लिए नहीं की जाती। साधना परम्पराओं को चलाने के लिए नहीं की जाती। साधना दुनियाा को उपदेश बघारने के लिए नहीं की जाती।

साधना के नाम पर कुछ लोग अपने व्यसनों का पोषण करना चाहते हैं। कुछ लोग प्रतिष्ठा पाने के लिए साधना का जीवन जीते हैं। कुछ घर-गृहस्थी से छुटकारा पाने के लिए एक रास्ता निकाल लेते हैं। किसी को पूजा की भूख वैसा करने को विवश करती है। किसी के मन में नरक आदि की यातनाओं का आतंक छाया रहता है, उससे बचाव के लिए साधु-जीवन को अंगीकार करते हैं। कुछ लोग आदर्शों के लिए दुनिया से विलक्षण पथ चुनते हैं। यह सब साधना नहीं, सौदा है, विनिमय है, धोखा है, विवशता है, बाध्यता है और मूर्खता है।

तभी तो भारत के प्रांगण में साधकों की भीड़ लगी है पर कोई परिणाम नहीं। सैकड़ों-सैकड़ों वर्षों से संयम-साधना की जा रही है, फिर भी साधकों और उनके परिपार्श्व से वैसा वातावरण तैयार नहीं हुआ, जैसा कि एक साधनानिष्ठ व्यक्ति के सम्पर्क से और सहवास से होना चाहिए।

साधना वह होती है, जहां का वातावरण आनन्द और प्रेममय बन जाता है। साधना वह होती है, जहां ईमानदारी और प्रामाणिकता मूर्त बन जाती है। साधना वह होती है, जहां शक्तियों का अजस्र स्रोत खुल जाता है।

ऐसी साधना क्रियाकाण्डों और परम्परागत धर्मों से नहीं, वह आन्तरिक पवित्रता, विशुद्ध प्रेम, स्वार्थ-त्याग, सहजता और अनाग्रह से होगी।

लघु-कथा

कलियुग का खेल

○ साध्वी मंजुश्री

एक युवक शहर से गांव जाकर अपना सामान बेचा करता था। उसे आने जाने में कठिनाई महसूस होने लगी। अतः उसने शहर में ठहरने का निर्णय किया और वह एक बस्ती में बुढ़िया के पास ठहरने लगा। बुढ़िया अपने बेटे के साथ रहती थी। युवक ने बुढ़िया से कहा– 'मैं सामान ला कर दे दिया करूंगा, आप मेरे लिए रोटी बना दिया करना।' यह सुनकर बुढ़िया प्रसन्न हो गई।

कुछ दिन पश्चात युवक ने देखा कि बुढ़िया अपने बेटे को तो बढ़िया भोजन देती है और गर्म-गर्म देती है और उसे ठण्डा भोजन देती है। एक दिन उसने बुढ़िया से कहा– 'मांजी ठण्ड़ी रोटियां बासी लगती हैं मुझे गर्म-गर्म बना कर दिया करें।'

बुढ़िया चालाक थी। उसने उत्तर दिया– 'बेटा रोटियां तो मैं गर्म ही बनाती हूं क्या करूं कलियुग का जमाना है, रोटियां जल्दी ठण्डी-बासी हो जाती हैं।' युवक समझ गया कि बुढ़िया चालाक है मन में कुछ काला है परन्तु वह चुप रहा।

एक दिन युवक ने कहा– 'मांजी आप मुझे पीपल का लोटा दे दें। मैं उस में दूध ला दिया करूंगा।' बुढ़िया ने उसे पीतल का लोटा दे दिया और वह उस लोटे में दूध लाने लगा। बुढ़िया बहुत खुश हो गई। युवक ने एक दिन वह लोटा बेच दिया और उस के स्थान पर मिट्टी के लोटे में दूध लाकर बुढ़िया को दे दिया। बुढ़िया ने कहा– बेटा मैंने तो तुम्हें पीतल का लोटा दिया था वह कहां गया? युवक ने पलटते ही उत्तर दिया– 'क्या करूं मां जी कलियुग का जमाना है दूध तो मैं पीतल के लोटे में ही लाया था देखते ही देखते मिट्टी का लोटा बन गया, न जाने इस कलियुग में क्या हो गया।

यह सुनकर बुढ़िया निरुतर हो गई और समझ गई कि युवक उसके कलियुग के खेल को जान चुका था।

अधिकार की तकरार

एक बार रामकृष्ण परमहंस के दो चेलों में विवाद हो गया कि हम में बड़ा कौन है?' निर्णय नहीं हो पाने पर दोनों श्री रामकृष्ण के पास पहुंचे और फैसला करने का निवेदन किया

परमहंस बोले, 'इसका निर्णय तो बहुत सरल है और यही है जो दूसरे को बड़ा समझता है, वही बड़ा है।'

–प्रस्तुति : पिंकी जैन

वास्तु-विज्ञान

वृक्षों का वास्तु-शास्त्र में महत्व

भारतीय संस्कृति में वृक्षों का अपना महत्वपूर्ण स्थान रहा है। अंततोगत्वा भूमि पर उत्पन्न होने वाले वृक्षों के आधार पर भूमि का चयन किया जाता है।

कांटेदार वृक्ष घर के समीप होने से शत्रु भय होता है। दूध वाला वृक्ष घर के समीप होने से धन का नाश होता है। फल वाले वृक्ष घर के समीप होने से संपति का नाश होता है। इनके काष्ठ भी घर पर लगाना अशुभ हैं। कांटेदार आदि वृक्षों को काटकर उनकी जगह अशोक, पुन्नाग व शमी रोपे जाएं तो उपयुक्त दोष नहीं लगता है।

- पाकर, गुलर, आम, नीम, बहेड़ा तथा कांटेदार वृक्ष, पीपल, अगस्त, इमली यह सभी घर के समीप निंदित कहे गए हैं।
- भवन निर्माण के पहले यह भी देख लेना चाहिए कि भूमि पर वृक्ष, लता, पौधे, झाड़ी, घास, कांटेदार वृक्ष आदि नहीं हो।
- जिस भूमि पर पपीता, आंवला, अमरूद, अनार, पलाश आदि के वृक्ष अधिक मात्रा में हो वह भूमि, वास्तु शास्त्र में बहुत श्रेष्ठ बताई गई है।
- जिन वृक्षों पर फूल आते रहते हैं और लता एवं वनस्पतियां सरलता से वृद्धि करती हैं इस प्रकार की भूमि भी वास्तु शास्त्र में उत्तम बताई गई है।
- जिस भूमि पर कंटीले वृक्ष, सूखी घास, बैर आदि वृक्ष उत्पन्न होते हैं। वह भूमि वास्तु में निषेध बताई गई है।
- जो व्यक्ति अपने भवन में सुखी रहना चाहते हैं उन्हें कभी भी उस भूमि पर निर्माण नहीं करना चाहिए, जहां पीपल या बड़ का पेड़ हो।
- भवन के निकट वृक्ष कम से कम दूरी पर होना चाहिए ताकि दोपहर की छाया भवन पर न पड़े।
- सीताफल के वृक्ष वाले स्थान पर भी या उसके आसपास भी भवन नहीं बनाना चाहिए। इसे भी वास्तु शास्त्र ने उचित नहीं माना है, क्योंकि सीताफल के वृक्ष पर हमेशा जहरीले जीव-जंतु का वास होता है।
- जिस भूमि पर तुलसी के पौधे लगे हो वहां भवन निर्माण करना उत्तम है। तुलसी का पौधा अपने चारों ओर का 50 मीटर तक का वातावरण शुद्ध रखता है, क्योंकि शास्त्रों में यह पौधा बहुत ही पवित्र एवं पूजनीय माना गया है।

–प्रस्तुति : नमन जैन

बेताल पच्चीसी-2

हिन्दी कथा-साहित्य में बेताल पच्चीसी की अपनी अलग पहचान है। इन कथाओं में नीति, संस्कृति और जीवनोपयोगी शिक्षाएं हैं। उसी की एक-एक कथा पढिये हर अंक में। *-गतांक से आगे*

यमुना के किनारे धर्मस्थान नामक एक नगर था। उस नगर में गणाधिप नाम का राजा राज करता था। उसी में केशव नाम का एक ब्राह्मण यमुना के तट पर जप-तप किया करता था। उसकी एक लड़की थी, जिसका नाम मालती था। वह बड़ी रुपवती थी। जब वह ब्याह के योग्य हुई तो उसके माता-पिता और भाई को चिन्ता हुई। संयोग से एक दिन जब ब्राह्मण अपने किसी यजमान की बारात में गया था और भाई पढ़ने गया था, तभी उनके घर में एक ब्राह्मण का लड़का आया। लड़की की मां ने उसके रूप और गुणों को देखकर उससे कहा कि मैं तुमसे अपनी लड़की का ब्याह करूंगी। होनहार की बात कि उधर ब्राह्मण पिता को भी एक दूसरा लड़का मिल गया और उसने उस लड़के को भी यही वचन दे दिया। उधर ब्राह्मण का लड़का जहां पढ़ने गया था, वहां वह एक लड़के से यही वादा कर आया।

कुछ समय बाद बात-बेटे घर में इकट्ठे हुए तो देखते क्या हैं कि वहां एक तीसरा लड़का और मौजूद है। दो उनके साथ आये थे। अब क्या हो? ब्राह्मण, उसका लड़का और ब्राह्मणी बड़े सोच में पड़े। दैवयोग से हुआ क्या कि लड़की को सांप ने काट लिया और वह मर गयी। उसके बाप, भाई और तीनों लड़कों ने बड़ी भाग-दौड़ की, जहर झाड़ने वालों को बुलाया, पर कोई नजीजा न निकला। सब अपनी-अपनी करके चले गये।

दुःखी होकर वे उस लड़की को शमशान में ले गये और क्रिया-कर्म कर आये। तीनों लड़कों में से एक ने तो उसकी हड्डियां चुन लीं और फकीर बनकर जंगल में चला गया। दूसरे ने राख की गठरी बांधी और वहीं झोपड़ी डालकर रहने लगा। तीसरा योगी होकर देश-देश घूमने लगा।

एक दिन की बात है, वह तीसरा लड़का घूमते-घामते किसी नगर में पहुंचा और एक ब्राह्मणी के घर भोजन करने बैठा। जैसे ही उस घर की ब्राह्मणी भोजन परोसने आयी कि उसके छोटे लड़के ने उसका आंचल पकड़ लिया। ब्राह्मणी ने अपना आंचल छुडाना चाहा पर वह उसे छोड़ ही नहीं रहा था। ब्राह्मणी को बड़ा गुस्सा आया। उसने अपने लड़के को झिड़का, मारा-पीटा, फिर भी वह न माना तो ब्राह्मणी ने उसे उठाकर जलते चूल्हे में पटक दिया। लड़का जलकर राख हो गया। ब्राह्मण बिना भोजन किये ही उठ खड़ा हुआ। घरवालों ने बहुतेरा कहा, पर वह भोजन करने के लिए राजी न हुआ। उसने कहा जिस घर में ऐसी राक्षसी हो, उस घर में मैं भोजन नहीं कर सकता।

इतना सुनकर वह आदमी भीतर गया और संजीवनी विद्या की पोथी लाकर एक मंत्र पढ़ा। जलकर राख हो चुका लड़का फिर से जीवित हो गया।

यह देखकर ब्राह्मण सोचने लगा कि अगर यह पोथी मेरे हाथ पड़ जाये तो मैं भी उस लड़की को फिर से जिंदा कर सकता हूं। इसके बाद उसने भोजन किया और वहीं ठहर गया। जब रात को सब खा-पीकर सो गये तो वह ब्राह्मण चुपचाप वह पोथी लेकर चल दिया। जिस स्थान पर उस लड़की को जलाया गया था, वहां जाकर उसने देखा कि दूसरे लड़के वहां बैठे बातें कर रहे हैं। इस ब्राह्मण के यह कहने पर कि उसे संजीवनी विद्या की पोथी मिल गयी है और वह मंत्र पढ़कर लड़की को जिंदा कर सकता है, उन दोनों ने हड्डियां और राख निकाली। ब्राह्मण ने जैसे ही मंत्र पढ़ा, वह लड़की जी उठी। अब तीनों उसके पीछे आपस में झगड़ने लगे।

इतना कहकर बेताल बोला- राजा, बताओ कि वह लड़की किसकी स्त्री होनी चाहिए?

राजा ने जवाब दिया- जो वहां कुटिया बनाकर रहा, उसकी।

बेताल ने पूछा- क्यों?

राजा बोला- जिसने हड्डियां रखीं, वह तो उसके बेटे के बराबर हुआ। जिसने विद्या सीखकर जीवन-दान दिया, वह बात के बराबर हुआ। जो राख लेकर रमा रहा, वही उसकी हकदार है। राजा का यह जवाब सुनकर बेताल फिर पेड़ पर जा लटका। राजा को फिर लौटना पड़ा और जब वह उसे लेकर चला तो बेताल ने तीसरी कहानी सुनायी। **(क्रमशः)**

-प्रस्तुति : साध्वी वसुमती

मृत्यु का आनन्द

एक वैद्य स्वर्ण भस्म बनाने के लिये बार-बार सोने को आग में डाल रहा था। आग ने सोने से सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा, 'यह वैद्य कितना बुरा है, जो तुम्हारे जैसी कीमती चीज को बार-बार जलाकर भस्म कर रहा है।'

इस पर सोना बोला, 'मुझे तो इसमें बड़ा आनंद आ रहा है क्योंकि मृत्यु तो एक दिन निश्चित है।

'फिर हम यदि मरकर भी दूसरे किसी के काम आ सकें तो इससे बढ़कर और क्या अच्छाई हो सकती है?'

-प्रस्तुति : गगन जैन

सच्चा गुरु कौन?

गुरु के बिना गति नहीं होती, ज्ञान नहीं होता- यह बात कहां तक ठीक है?

यह बात एकदम ठीक है, सच्ची है, परन्तु केवल गुरु बनाने से अथवा गुरु बनने से कल्याण, मुक्ति हो जाय- यह बात ठीक जंचती नहीं यदि गुरु के भीतर यह भाव रहता है कि 'मेरे बहुत-से शिष्य बन जाए, मेरा एक सम्प्रदाय (टोली) बन जाय, मैं एक बड़ा आदमी बन जाऊं' आदि और शिष्य का भी यह भाव रहता है कि 'एक चद्दर, एक नारियल और एक रुपया देने से मेरा गुरु बन जायगा, गुरु मेरे सब पाप हर लेगा' आदि, तो ऐसे गुरु-शिष्य के सम्बन्ध मात्र से कल्याण नहीं होता। कारण कि जैसे सांसारिक माता-पिता, भाई-भौजाई, स्त्री-पुत्र का सम्बन्ध है, ऐसे ही गुरु का एक और सम्बन्ध हो गया!

जिनके दर्शन, स्पर्श, भाषण और चिन्तन से हमारे दुर्गुण-दुराचार दूर होते हैं, हमें शान्ति मिलती है, हमारे में दैवी-सम्पत्ति बिना बुलाये आती है और जिनके वचनों से हमारे भीतर की शंकाएं दूर हो जाती हैं, शंकाओं का समाधान हो जाता है, भीतर से परमात्मा की तरफ गति हो जाती है, पारमार्थिक बातें प्रिय लगने लगती हैं, पारमार्थिक मार्ग ठीक-ठीक दिखने लगता है। ऐसे गुरु से हमारा कल्याण होता है। यदि ऐसा गुरु (सन्त) न मिले तो जिनके संग से हम साधन में लगे रहें, हमारी पारमार्थिक रुचि बनी रहे, ऐसे साधनों से सम्बन्ध जोड़ना चाहिये। परन्तु उनसे हमारा सम्बन्ध केवल पारमार्थिक होना चाहिये, व्यक्तिगत नहीं। फिर भगवान् ऐसी परिस्थिति, घटना भेजेंगे कि हमें वह सम्बन्ध छोड़कर दूसरी जगह जाना पडेगा और वहां हमें अच्छे सन्त मिल जायंगे! वे सन्त चाहे साधुवेश में हों, चाहे गृहस्थ वेश में हों, उनका संग करने से हमें विशेष लाभ होगा। तात्पर्य है कि भगवान् प्रधानाध्यापक की तरह हैं, वे समय पर स्वतः कक्षा बदल देते हैं। अतः हमें भगवान् पर विश्वास करके रुचिपूर्वक साधना में लग जाना चाहिये।

गीता में भगवान् ने कहा है कि 'जो मेरा आश्रय लेकर यत्न करते हैं, वे सब कुछ जान जाते हैं।' अतः भगवान् पर विश्वास और भरोसा रखते हुए साधन-सम्बन्धी, भगवत्सम्बन्धी बातें सुननी चाहिये और सत्कर्म, सच्चर्चा, सच्चिन्तन करते हुए तथा सबके साथ सद्भाव रखते हुए साधन करना चाहि। फिर किसी सन्त से, किसी शास्त्र से, किसी घटना आदि से अचानक परमात्मतत्त्वका बोध जाग्रत् हो जाएगा।

यदि गुरु मिल गया और ज्ञान नहीं हुआ तो वास्तव में असली गुरु मिला ही नहीं। असली गुरु मिल जाय और साधक साधन में तत्पर हो तो ज्ञान हो ही जाएगा। यह हो ही नहीं सकता कि अच्छा साधक हो, असली सन्त मिल जाय और बोध न हो! एक कहावत है-

गुरु कुम्हार शिष्य कुंभ है, गढि-गढि काढे खोट।
अंदर हाथ सहाय दे, बाहर मारे चोट।।

तात्पर्य है कि यदि शिष्य गुरु से दिल खोलकर सरलता से मिले, कुछ छिपाकर न रखे तो शिष्य में वह शक्ति प्रकट हो जाती है, जिस शक्ति से उसका कल्याण हो जाता है।

गुरु-तत्व नित्य होता है और वह कहीं भी किसी घटना से, किसी परिस्थिति से, किसी पुस्तक से, किसी व्यक्ति आदि से मिल सकता है। अतः गुरु के बिना ज्ञान नहीं होता- यह बात सच्ची है।

-प्रस्तुति : नूतन जैन

नकली दिमाग से काम लो

भेजा फ्राई हो जाए तो फिकर नॉट... अपने ब्रेन को आराम दीजिए और नकली दिमाग से काम लीजिए! शायद ये आपके असली दिमाग से ज्यादा स्मार्ट हो। साइंटिस्टों का तो यही दावा है।

स्विस साइंटिस्टों की एक टीम आर्टिफिशल माइंड बनाने में जुटी है और उनका दावा है कि अगले आठ साल में यानी 2018 तक वे नकली दिमाग तैयार कर लेंगे। इस टीम के लीडर प्रोफेसर हेनरी मारक्रम का दावा है कि यह दुनिया का पहली नकली इंटेलिजेंट और एक्टिव माइंड होगा। ब्रिटिश अखबार 'डेली मेल' में छपी रिपोर्ट के मुताबिक, उसे सोने, कॉपर और सिलिकन से बनाया जा रहा है।

लॉजैन स्थित इकोल पॉलिटेक्नीक के ब्रेन माइंड इंस्टिट्यूट में प्रोफेसर मारक्रम के मुताबिक, नकली दिमाग के जरिए पागलपन पर फतह हासिल की जा सकेगी, इंसानी समझ और सीखने की ताकत को बढ़ाया जा सकेगा। मारक्रम का यह ब्लू ब्रेन दिमाग की कंप्यूटराइज्ड कॉपी तैयार करेगा। इसकी शुरुआत चूहे के दिमाग से की जा रही है और धीरे-धीरे इंसानी दिमाग की कॉपी कर नकली दिमाग तैयार होगा। वैज्ञानिकों का कहना है कि कंप्यूटर के जरिए तैयार किया गया यह दिमाग सोच सकेगा, तर्क कर सकेगा, अपनी इच्छा जाहिर कर सकेगा। और तो और, प्यार, गुस्सा, दर्द, दुख और खुशी जैसी भावनाओं को महसूस भी कर सकेगा। मारक्रम कहते हैं कि 2018 तक हमें इसे तैयार करने में कामयाबी मिल जाएगी। इसके लिए बहुत पैसे की जरूरत होगी, जो हमें अभी से मिलने लगा है। दुनिया के कई साइंटिस्ट अपने रिसोर्स लेकर मेरे साथ इस काम में जुट गए हैं।

-प्रस्तुति : साध्वी पद्मश्री

दीपावली आत्मा का पर्व

दीपावली दीपों का पर्व। सत्य की असत्य पर विजय या अंधकार से प्रकाश की ओर जाना। लोग कहते हैं कि कार्तिक अमावस्या के घोर तिमिर को दीप जलाकर हम अपने अन्तरतम के अंधियारे को दूर करते हैं, प्रकाश फैलाते हैं। जैनिज्म ऐसा नहीं कहता क्योंकि कहां जाओगे अंधकार से भाग कर प्रकाश की ओर? कितना जाओगे? जैनिज्म कहता है कि अंधकार भी प्रकाश के विपरित ध्रुव के परमाणु है फिर दीपावली क्या है? प्रकाश की ललक क्या है? प्रकाश कोई वह स्थान नहीं है जहां जाया जा सके। प्रकाश तो आत्मा के जागरण का नाम है। प्रकाश आकाश की तरह विशेष प्रकाश से पारदर्शी हो जाना। वह आत्मा का स्वयं का ही स्वरूप होता है जब वह प्रकट होता है तब अंधकार रहता ही नहीं सारी दुनियां त्रिकाल भासित होती है।

दीपावली अंधकार से प्रकाश की ओर जाने का त्यौहार नहीं है बल्कि आत्मा के प्रकाश को प्रकट करने का त्यौहार है। जैसे ही आत्मा का प्रकाश प्रकट हो जायेगा वैसे ही आत्मा के चारों ओर का अंधकार रूपी आवरण हट जायेगा और आपकी तो दीपावली हो जायेगी। अतः दीपावली अंधकार से प्रकाश की ओर जाने का त्यौहार नहीं है बल्कि प्रकाशमय होने का त्यौहार है। इस दुनिया में अंधकार कभी मिटा नहीं है, मिट सकता नहीं है चाहे हम कितने ही दीप जला लें। इस दुनियां में हजारों लाखों लोग दान देते आये हैं, क्या गरीबी कम हुई? हजारों महात्माओं ने सदा सत्य बोलो का उपदेश दिया कितने व्यक्तियों ने झूठ बोलना छोड़ा। यहां अंधकार का मतलब है अज्ञान। अंधकार का शाब्दिक अर्थ होता है- अन+धकार-सत्य की धारणा का परिपक्व नहीं होना ही वास्तविक अंधकार होता है। अतः अज्ञान, व्यक्तिगत मोह, व्यक्तिगत राग, द्वेष के कारण हमेशा रहेगा। अगर आप समकित हो जाते हैं तभी अपनी इस आत्मा के अज्ञान के वावरा को दूर हटा सकते हैं। जहां तक प्रकाश की ओर जाने की बात है तो आत्मा स्वयं प्रकाशमान ही है। भैतिक प्रकाश अपने आप में वह विधा है जो हर बात प्राप्ति के बाद अंधकार का ही काम करेगा।

जैसे एक किलो हलवे में 700-750 ग्राम शक्कर या ज्यादा से ज्यादा 1 किलो शक्कर डाली जाये तो वह अच्छा लगेगा किंतु यदि एक किलो हलवे में 3 किलो शक्कर डाल दी जाये तो वह शक्कर खारी लगने लग जायेगी। तो फिर प्रकाश की उत्कृष्टता का मापदण्ड क्या? इसे हम यूं भी समझ सकते हैं कि पहले जमाने में प्रसूता को अंधेरे में रखा जाता था ताकि बच्चे की आंखों की रोशनी या देखने की शक्ति अधिक हो वह सूक्ष्मदर्शी बने। मगर आज घर-घर विद्युत होने से हमारे आंखें कमजोर होती जा रही हैं तीव्र प्रकाश में देखने से आंखों की देखने की शक्ति का ह्रास होता है। एक सामान्य जंगली आदमी सामान्य या कम प्रकाश में भी जो देख सकता है वह आज के हमारे एडवांस बच्चे नहीं देख सकते। इस प्रकार दीपावली उस प्रकाश की बात नहीं करती जिसका कोई मापदण्ड ना हो, वह तो आत्मा के प्रकाश की बात करती है। वैसे भी प्रकाश में वस्तु तो प्रकाशित हो सकती है मगर आत्म स्वयं ज्योति नहीं बन सकती। अमावस्या को जब घोरतम अंधकार हो जब अंधकार की अति हो जावे तब उसमें प्रकाश फूटता है। इस प्रकार दीपावली मात्र एक त्यौहार नहीं, बल्कि एक क्रांति है, एक आध्यात्मिक क्रांति। क्रांति कभी घटती है जब दुःख, अव्यवस्था, असमंजसता अपनी अति तक पहुंच जाते हैं। जैसा कि गीता में कहा गया है-

यदा यदाहि धर्मस्य गलानिर्भवति भारत।
अभयुत्थानमधर्मस्य संभवामि युगे युगे।।

अर्थात जब-जब धर्म की हानि हाती है तब भगवान अववरित होते हैं। तो अमावस्या हानि का प्रतीक है। मगर इसे हानि का प्रतीक नहीं समझ कर नये प्रकाश का प्रतीक समझा जाये तो हम दीपावली के सही अर्थों को समझ पायेंगे। विज्ञान कहता है कि सर्दियों में 24 घण्टों में वह क्षण सबसे ज्यादा ठण्डा होता है जब सूर्योदय होने वाला होता है। सूर्य की पहली किरण जब धरती पर आती है। वह ठण्ड की अति होती है। इस प्रकार कार्तिक अमावस्या एक ऐसी संधि है जब अंधकार की अति होती है। यहीं से व्यक्ति निवृत्ति में सिद्ध हो सकता है। इसलिए मात्र दीपों का त्यौहार नहीं, बल्कि आत्म ज्योति प्रकटन का त्यौहार है।

लौकिक दृष्टि से दीपावली एक लोक पर्व है। कारण स्पष्ट है कि खरीफ की फसल पक चुकी होती है। किसान उसे काट चुका होता है। चार महिने की कठिन तपस्या के बाद उसके पास कुछ क्षण फुर्सत के होते हैं, पैसे की आवक हुई होती है तब वह थकावट मिटाने के लिए थोड़ा मौज मस्ती के मूड में आता है। अपनी सालभर की कुण्ठाएं बाहर निकालता है। इसलिए ये एक लौकिक पर्व है। परन्तु लौकिक दृष्टि से इसे कार्तिक पूर्णिमा को भी मानाया जा सकता था तो इसे कार्तिक अमावस्या को ही क्यों मनाया जाता है। इसके पीछे कारण है कि ये एक आध्यात्मिक पर्व है। यह वह संधि है जब मनुष्य अमावस्या के घोर तिमिर में आत्मा की ज्याति जलाता है।

वैदिक धर्मावम्बियों का दृष्टिकोण राम की कथा से जुड़ा हुआ है। मगर मैं नहीं समझती कि पर्व के पीछे केवल कथा ही होती है। कथाएं तो होती रहती है। और उनका राजनीतिकरण भी होता रहता था। कहते हैं कि दशहरे के दिन रावण का वध हुआ और उसके बाद 20 दिन की अवधि में वे अयोध्या लौटे, इसलिए दीप जलाकर उनका स्वागत

किया गया। संभव है यह घटना उसी दिन हुई हो मगर 20 दिन बहुत ज्यादा होते हैं क्योंकि पुष्पक विमान में बैठकर उन्हें लंका से अयोध्या पहुंचने में बीस दिन तो क्या 20 घंटे से ज्यादा नहीं लग सकते। तो इस बीच उन्होंने क्या किया इसका कहीं उल्लेख नहीं मिलता है। जो भी हो अच्छी घटनाओं से पर्वों को जोड़ा जाता है ताकि उनकी स्मृति बनी रहे। फिर राम के साथ जोड़ने से यह पर्व अपने भौतिक वैभव के साथ-साथ आध्यात्मिक छाप भी अक्षुण्ण बनाये रख सकता है। इस प्रकार ऐतिहासिक घटनाऐं तो बहुत होगी और उन्हें समाज याद करेगा या किन्ही परिस्थितियों में नहीं भी करेगा मगर आत्मिक घटनाएं बहुत विरल होती हैं और वह अमर होती है। मुक्त होने की घटना बहुत कम होती है और जैन धर्मालम्बी इसे विशेष महत्व देते हैं। दीपावली के दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में भगवान महावीर का निर्वाण हुआ था। इसलिए जैन धर्म में इसे विशेष महत्व दिया जाता है।

इस प्रकार दीपावली आत्मा के प्रकाश की बात करती है और उस प्रकाश से प्रेरणा पाकर दूसरी ज्योत भी प्रज्ज्वलित हो, तभी सच्चे अर्थों में दीपावली मनाई जायेगी।

-प्रस्तुति : प्रतिभा भण्डारी

टैक्स की कथा

एक बार एक राजा जंगल में शिकार खेलने गया। उनको शिकार खेलते-खेलते समय ज्यादा लग गया। और उन्हें प्यास लग गई। राजा ने अपने साथ मंत्री से बोले मंत्री जी मुझे प्यास लगी है पानी देखो कहां जंगल से बाहर एक गन्ने की दुकान दिखाई दी। मंत्री जी बोले- महाराज वह गन्ना बेच रहा है वहां पानी अवश्य मिलेगा। मंत्री राजा जी ने वहां जाकर पानी मांगा और गन्ने के एक गिलास का दाम पूछा, गन्ने वाले ने एक गिलास दाम मात्र 4 आने बताया। गन्ने का रस निकाल कर राजा को दिया उन्हें बहुत अच्छा लगा। शुद्ध था साफ था। बहुत प्रसन्न हुए। और जब आकर राज महल में अपने सिंहासन पर मुकुट लगा कर बैठे दरवार लगा तो उन्हें वह गन्ने वाला याद आ गया। उन्होंने मंत्री से पूछा गन्ने वाला कितना टैक्स देता है मंत्री बोले गन्ने वालों पर कोई टैक्स नहीं है महाराज। महाराज ने तुरन्त आदेश दिया टैक्स लगा दिया जाए। राजा की बात माननी थी टैक्स लगा दिया गया। बहुत दिन बाद राजा फिर शिकार पर गये। गन्ने की दुकान पर गये। गन्ने के रस में पहले जैसा स्वाद नहीं था। राजा ने मंत्री से कहा पहले जैसा स्वाद नहीं है। राजा ने दूसरा आदेश दिया यहीं एक चेकर बैठाया जाए जांच करता रहेगा। तीसरी बार राजा गये स्वाद ओर भी कम था। राजा ने तीसरा चेकर और बैठा दिया। स्वाद कम होता चला गया।

-जे.पी. शुक्ला

वीर बाला

सायंकाल साढ़े चार का समय था। नन्हीं सी नंदिनी नई कछार रोड़ पर खेल रही थी। सामने ही उसके परिवार की दुकान स्थित थी, लेकिन उनका ध्यान इस ओर नहीं था कि नंदिनी सड़क पर खेल रही है और कोई दुर्घटना हो सकती है।

सड़क पर वाहनों का आवागमन चालू था। परंतु नंदिनी इस ओर से बिल्कुल लापरवाह थी। वह सड़क पर उछल-कूद मचाए हुए थी।

कुछ ही दूर पर खडी बारह वर्षीय विमोला देवी नंदिनी को खेलते देख रही थी। उसे बच्ची का फुदकना बड़ा प्यारा लग रहा था। उसका जी चाहता था कि वह खुद भी दौड़कर बच्ची के पास पहुंच जाए और उसके साथ खेले।

विमोला देवी अपनी यह इच्छा पूरी भी न कर पाई कि अचानक सेंट्रल रिजर्व पुलिस की एक जीप तेजी के साथ नंदिनी के पीछे से आती दिखाई दी।

विमोला सिहर उठी। उसे लगा कि वह जीप भोली- भाली बालिका को कुचल देगी। इसी क्षण जीप नंदिनी के बिलकुल करीब आ गई। जीप का अगला पहिया नंदिनी पर चढ़ने ही वाला था कि विमोला फुरती से झपटी और उसने नंदिनी का हाथ पकड़कर उसे तेजी से आगे खींच लिया। जीप नंदिनी को छूती सी आगे निकल गई। नंदिनी भय से चीखकर अचेत हो गई। अपनी जान को खतरे में डालकर नंदिनी की जान बचाने वाली विमोला देवी को इस रक्षा कार्य में चोट आ गई। मगर उसे उस बात का रंचमात्र भी चिंता नहीं थी। वह तो बेहद खुश थी कि उसने नंदिनी की जान बचा ली। विमोला देवी नंदिनी को अपने हृदय से लगाए हुए थी, इसी समय नंदिनी के परिवार वाले दौड़कर आ गए। सड़क पर चलते राहगीर भी उसे घेरकर खड़े हो गए।

सभी विमोला की सूझ-बूझ की प्रशंसा कर रहे थे कि उसके ही कारण नंदिनी मौत के मुंह से जाकर लौट आई है। इस पर भोली-भाली विमोला देवी ने बिना किसी अभिमान के सहजभाव से कहा- 'अगर नंदिनी को बचाने में मेरे प्राण भी चले जाते तो मुझे कोई दुःख न होता।'

कुछ क्षणों बाद नंदिनी चेतना में आ गई। उसने प्राण बचाने वाली विमोला को आदर, आभार और श्रद्धा के भाव से देखा। विमोला उसे स्वस्थ देखकर हर्ष विभोर हो उठी। उसने नंदिनी को प्यार से चूम लिया। यह घटना 9 अगस्त, 1974 की है। मणिपुर की इस वीर साहसी बालिका को जीवन रक्षा करने के फलस्वरूप राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

-शंकर सुलतानपुरी

चतुर चरवाहा

एक थी राजकुमारी। वह अपने मां-बाप की इकलौती संतान थी। पिता के लाड़-प्यार की वजह से वह कुछ बिगड़ैल और घमंडी हो गई थी। जब राजकुमारी जवान हुई तो हर बाप की तरह राजा ने उसके विवाह के बारे में सोचना शुरू किया। राजा ने अपनी बेटी से उसकी पसंद के बारे में पूछा। राजकुमारी ने कहा- 'पिताजी, जो आपकी पसंद है, वही मेरी पसंद है। बस मेरी एक शर्त है।'

'वह क्या?' राजा ने बेटी को दुलारते हुए पूछा।

'मैं अपने होने वाले पति की एक परीक्षा लूंगी।'

'ठीक है, जैसी तुम्हारी मर्जी। पर यह तो बताओ कि तुम्हारी यह परीक्षा क्या होगी?'

'पिताजी, कोई मुश्किल नहीं। बस मेरे होने वाले पति को एक से बीस तक की गिनती गिननी होगी। जो युवक अपनी गर्दन तक मेरी तलवार के पहुंचने से पहले ही गिनती पूरी कर लेगा, उसे ही मैं अपना पति बनाऊंगी।

राजा को अपनी बेटी की शर्त बड़ी अजीब लगी। पर उन्होंने न चाहते हुए भी राजकुमारी की शर्त मान ली। अगले दिन ही राजकुमारी की इच्छा का ऐलान समूचे राज्य में कर दिया गया। लोग कहते, 'भला यह भी कोई शर्त है? 20 तक गिनती करने में देर की कितनी लगती है।' राज्य के कोने-कोने से अपने को चतुर सुजान मानने वाले बहुत से बांके नौजवान अपनी किस्मत आजमाने राजधानी पहुंचने लगे।

राजा द्वारा तय किए गए दिन से परीक्षा शुरू हो गई। जो बात सुनने में आसान लगती थी वो करने में टढ़ी खीर साबित हुई। अभी पांच तक ही गिनती हो पाती कि राजकुमारी की तलवार नौजवान की गर्दन काट डालती। कुछ ही दिनों में बहुत से नौजवान अपनी जान गंवा बैठे तो राजकुमारी को ब्याहने का सपना देखने वाले बाकी युवकों के हौसले पर पानी फिरने लगा। कई तो रास्ते से ही अपने गांव या कस्बे को लौट गए।

बेटी की शर्त पूरी होते न देख कर राजा को बेटी की शादी की चिंता सताने लगी। अब शर्त वापस लेना संभव नहीं था। उन्हें पता था कि राजकुमारी कभी भी इसके लिए तैयार नहीं होगी और फिर ऐसा करने में राज्य की भी बदनामी थी। उन्हें डर लगने लगा कि कहीं राजकुमारी उम्रभर कुंआरी ही न रह जाए।

तभी एक दिन एक चरवाहे ने राजमहल के द्वार पर दस्तक दी। दरबान ने उसके आने का कारण पूछा तो वह बोला- 'मैं राजकुमारी से शादी करना चाहता हूं।'

दरबान और आसपास खड़े लोग यह सुनकर जोर से हंसने लगे।

राजकुमारी भी चरवाहे को देखकर क्रोध से बिफर उठी। चरवाहे को डांटते हुए बोली- 'तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई यहां आने की? खैरियत चाहते हो तो यहां से फौरन खिसक जाओ। जब राजकुमार और जमींदारों के बेटे तक मेरी शर्त पूरी नहीं कर पाए तो तुम किस खेत की मूली हो?'

पर चरवाहे ने धीरज नहीं छोड़ा। वह विनम्रता से बोला- 'राजकुमारी जी, आपने जो शर्त रखी है, मैं वह पूरी करने को तैयार हूं। इसलिए आपको क्रोध नहीं करना चाहिए।'

राजा ने भी अपनी बेटी को शांत रहने को कहा। उन्होंने सोचा एक तमाशा और सही। राजकुमारी ने कुछ दिनों से म्यान में पड़ी अपनी तलवार निकाली और चरवाहे को हिकारत भरी नजर से देखते हुए गिनती शुरू करने को कहा।

परन्तु राजकुमारी का गुस्सा व नफरत देखकर भी चरवाहे के चेहरे पर शिकन तक नहीं आई। वह उसे और चिढ़ाने के लिए बोला- 'तो शुरू करूं?'

'हां, कह तो रही हूं कि शुरू करो।' राजकुमारी ने अपनी तलवार हिलाते हुए कहा।

बिना घबराए चरवाहा बोला- 'राजकुमारी जी, आपे से बाहर मत जाओ। ध्यान से सुनो। यह है गिनती- एक हैं राम, दो हैं धरती और आसमान, तीसरा है त्रेता युग, चार हैं वेद, पांच हैं पांडव, छठा है नारायण, सात दिनों का हफ्ता होता है, नौ नवरात्र होते हैं, दसवें को दशहरा होता है, ग्यारहवीं (एकदशी) का चंद्रमा पावन होता है, बारह महीने होते हैं, तेरह लोक हैं, चौदह साल का बनवास होता है, पंद्रह श्राद्ध होते हैं, सोलह श्रृंगार हैं, सत्रहवीं रात रोशनी की रात होती है, अठारहवां प्यार है, उन्नीसवीं तुम हो, बीसवां मैं हूं और इक्सीसवीं है यह लाठी। अब मेरे साथ चलने को तैयार हो जाओ, नहीं तो यह लाठी तुम्हारे सिर पर पडेगी।'

राजकुमारी समझ नहीं पा रही थीं कि हो क्या रहा है। चरवाहे की अनोखी गिनती सुनकर वह तलवार चलाना ही भूल गई। वह अपनी शर्त हार चुकी थी। चरवाहे ने उसे राजमहल से बाहर चलने को कहा। वह चुपचाप चरवाहे के पीछे चल पड़ी।

बाद में राजा ने धूमधाम से चरवाहे के साथ राजकुमारी की शादी की।

-सुभाष सेतिया

नींबू रस अरु शहद में, गरम नीर मिलवाय।
जो सदैव पीता रहे, तन पतला हो जाये।।

पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री रूपचन्द्रजी के मार्गदर्शन में-
ekuo efanj fe'ku VªV }kjk lapkfyr xfrfof/k;ka

1. मानव मंदिर गुरुकुल (जरूरतमंद व बेसहारा बच्चों का घर)
2. सेवाधाम प्लस आयुर्वेद योग, एक्युप्रेशर एवं नेचरोपैथी सेन्टर।
3. मानव मंदिर प्रकाशन :
   पूज्य गुरुदेव द्वारा रचित साहित्य का प्रकाशन एवं प्रवचनों, भजनों आडियो, विडियो आदि का प्रचार प्रसार करना और संरक्षण करना।
4. रूपरेखा मासिक पत्रिका का प्रकाशन
   जो भारत ही नहीं विदेशों में भी जन-जन तक पूज्य गुरुदेव के संदेशों, प्रवचनों, प्रेरणादायी लेख योग, स्वास्थ्य, कहानियां, नई जानकारियां, ज्योतिष, समाचार, चुटकुलों आदि से ओत-प्रोत ज्ञान और आंनद की गंगा का प्रवाह कर रही मासिक पत्रिका रूपरेखा का सफल संचालन।
5. मानव मंदिर गऊशाला।
6. ध्यान मंदिर एक ऐसा मंदिर जहां भगवान महावीर की ध्यान लीन प्रतिमा के सम्मुख बैठकर समाज का हरवर्ग सम्प्रदाय और जाति-वर्ण से मुक्त होकर स्वयं को जानने की कोशिश करता हुआ अन्तर्मुखी हो जाता है।
7. साधु-साध्वियों और वृद्ध बुजर्गों के सेवा-प्रकल्प।
8. गरीब महिलाओं के लिये सेवा-कार्य मानव मंदिर का हिसार सेंटर इस दिशा में पिछले अनेकों वर्षों से कार्य कर रहा है।
9. योग-सुधार कार्यक्रम :
   आचार्यश्री रूपचन्द्र जी महाराज के मार्ग दर्शन में योगी अरुण तिवारी द्वारा योग का सही ढंग से प्रस्तुतीकरण। श्री अरुण योगी के निर्देशन में आयोजित योग-शिविरों से हजारों लोगों ने अपने योगाभ्यास में होने वाली त्रुटियों का संशोधन करके स्वास्थ्य-लाभ लिया है।
10. अन्तराष्ट्रीय कार्यक्रम :
    पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री रूपचन्द्र जी महाराज 1991 से आजतक लगातार अमेरिका, कनाडा, लंदन, नेपाल, चीन, यूरोप के अनेकों देशों में योग-ध्यान, आध्यात्म और भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार के साथ शाकाहार, पर्यावरण रक्षा, अहिंसा, विश्वशांति जैसे विश्व के कल्याणकारी कार्यक्रमों के माध्यम से सम्पूर्ण मानव जाति के लिए अतुलनीय योगदान दे रहे हैं। अब तक हजारों विदेशी और अप्रवासी भारतीय इस मिशन के साथ जुड़ चुके हैं।

अब हम इंटरनेट पर भी : मानव मंदिर मिशन ट्रष्ट की सारी गतिविधियों की जानकारी और पूज्य गुरुदेव जी द्वारा रचित पुस्तकें, प्रवचन, भजन, आडियो, फोटो आदि व तमाम महत्वपूर्ण और ताजा जानकारी हमारी वेबसाइट पर उपलब्ध है। रूपरेखा मासिक पत्रिका के सभी अंक आप घर बैठे पढ़ सकते हैं। सभी डाउनलोड निःशुल्क हैं। हमारी वेबसाइटों का विवरण इस प्रकार है-

1. पूज्य गरूदेव की बेवसाइट : www.acharyaroopchandra.com
2. रूपरेखा की बेवसाइट : www.rooprekha.com
3. मानव मंदिर गुरूकुल से संबधित बेवसाइट : www.manavmandir.info
4. सेवाधाम प्लस योग, आयुर्वेद, नेचुरोपैथी अक्यूप्रेशर से जुड़ी बेवसाइट : www.sevadham.info

प्रकृति की अनूठी दवा अदरक

प्रकृति ने हमें अपने खजाने से अनेक जड़ी-बूटियां, वनस्पतियां दी हैं। इनका चिकित्सा जगत में कई हजार सालों से प्रयोग हो रहा है। यही नहीं आज चिकित्सा जगत में इस्तेमाल होने वाली दवाइयों के बेसिक फार्मूले भी जड़ी-बूटियों से ही लिये गये हैं। उदाहरण के तौर पर कुनैन को ही लें। इसका इस्तेमाल दवाई के तौर पर किया जाता है। किसी जमाने में सिंचोना नामक जड़ी-बूटी की छाल का इस्तेमाल मलेरिया की रोकथाम के लिए किया जाता था। बाद में इसी जड़ी-बूटी की छाल से कुनैन तैयार की गयी। उदाहरण के तौर पर हम अपने भोजन को पकाने के दौरान अदरक का प्रयोग करते हैं। वास्तव में हम इसके फायदों को काफी कुछ जानते हैं। हालांकि बहुत कुछ जानने के बावजूद हमें यह नहीं पता होता कि अदरक में कई बीमारियों को दूर भगाने के गुण मौजूद होते हैं।

अदरक हमारी सांसों को तरोताजा करता है। जब हम रिफाइंड या कार्बोहाइड्रेट युक्त भोजन खाते हैं तो हमारे मुंह के भीतर कार्बोहाइड्रेट के बचे कण मुंह में बैक्टीरिया पैदा करते हैं। यह बैक्टीरिया लगातार वृद्धि करता है। बैक्टीरिया की वृद्धि के कारण पीएच एसिड का स्तर मुंह के भीतर बढ़ जाता है जो हमारे दांतों के इनेमिल को नष्ट कर देता है और दांत जल्दी गिर जाते हैं। अदरक का उपयोग ऐसी स्थिति में उपयोगी साबित हो सकता है। अदरक बैक्टीरिया रोधी होती है। यह हमारे स्लाइवा के बहाव को कम करती है और सांसों को तरोताजा बनाती है। अदरक शरीर में कालेस्ट्राल के नियंत्रण में भी सहायक होती है। कालेस्ट्राल हमारे जैविक क्रियाकलाप का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। जब हमारे शरीर में कालेस्ट्राल के बनने की प्रक्रिया तीव्र हो जाती है या जो कालेस्ट्राल शरीर से बाहर जाना चाहिए, वह नहीं जा पाता तो हमें समस्या होने लगती है। अदरक में कालेस्ट्राल को नियंत्रित करने का गुण होता है। अदरक हमारे लीवर और रक्त को प्रभावित करता है। कालेस्ट्राल के निर्माण में यह महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अदरक भूख को बढ़ाती है। रक्तधमनियों में आने वाले अवरोध और उससे होने वाली दिल संबंधी बीमारियों की समस्याओं को दूर करती है। जोड़ों के दर्द में, अस्थमा और श्वास नली में आने वाली रुकावट, आर्थराइटिस जैसी बीमारी में फायदेमंद होती है। अदरक तुरंत शरीर में पच जाती है। थोड़ी सी अदरक को खाने के बाद और खाने से पहले यदि नमक के साथ खाया जाए तो इससे कब्ज की शिकायत दूर होती है। पेट में अफारा और गैस में लाभकारी होती है। उल्टी और दस्त में भी यह फायदेमंद होती है। इसके अलावा मासिकधर्म के दौरान होने वाले पेट और कमर के दर्द में भी फायदेमंद होती है।

-योगी अरूण तिवारी

मासिक राशि भविष्यफल-नवम्बर, 2013

○ डॉ. एन.पी मित्तल, पलवल

मेष- मेष राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह अवरोधों के चलते सीमित आय कराने वाला है। माह का केवल अन्तिम सप्ताह शुभ फल दायक कहा जा सकता है। इस माह आय से व्यय अधिक होने के आसार हैं। श्रम भी अधिक करना होगा। अपनी वाणी पर संयम रखेंगे तो परिवार में सामान्जस्य बिठा पायेंगे।

वृष- वृष राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह शुभ फल दायक रहेगा। फिर भी माह का पूर्वार्ध, उत्तरार्ध से अच्छा कहा जायेगा। परिवार में सामन्जस्य बिठाने में प्रयत्न करना पड़ेगा तभी सफलता मिलेगी जो आप कर पायेंगे। दाम्पत्य जीवन में स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहते हुए, मिठास बनाए रखें।

मिथुन- मिथुन राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह पूर्वार्ध की अपेक्षा उत्तरार्ध में अधिक शुभ फल दायक है परन्तु किसी न किसी कारण मानसिक तनाव की स्थिति बनी रहेगी। हाँ साझेदारी के कार्य में कुछ फायदा हो सकता है। व्यय करते समय थोड़ा विचार कर लें। इस माह कोई मुकद्में बाजी की भी नौबत आ सकती है। परिवार में कोई मांगलिक कार्य सम्भावित है।

कर्क- कर्क राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय कि दृष्टि से यह माह शुभ फल दायक कहा जायेगा। आय में कोई अवरोध आए, ऐसा नहीं लगता। किन्हीं जातकों के रूके हुए पैसे भी वापिस मिल जांयगे। परन्तु इस माह कोई घरेलू या सामाजिक समस्या परेशान कर सकती है। दाम्पत्य जीवन में मधुरता बनी रहेगी जिससे समस्याओं का हल निकल आयेगा। स्वास्थ्य भी सामान्य रहेगा।

सिंह- सिंह राशि के जातकों के लिए यह माह अनुकूल स्थिति लिए हुए है। किन्हीं जातकों को पिछला उधार दिया हुआ पैसा भी वापिस मिल जाएगा। घर-परिवार में किसी मांगलिक कार्य के होने से खुशी का माहौल रहेगा। सामाजिक प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए प्रयत्न शील रहना होगा। माह के उत्तरार्ध में बुजुर्गों को किसी दिल की बीमारी से जूझना पड़ सकता है।

कन्या- कन्या राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह अवरोधों के चलते लाभ दायक रहेगा। साझेदारी के कामों में झगड़े हो सकते हैं, अन्यथा भी अकारण हो आप किसी झगड़े में फंस सकते हैं। सचेत रहें। श्रम अधिक करना पड़ेगा। व्ययाधिक्य को भी सम्भावना। घर-परिवार में सामन्जस्य बना रहेगा। स्वास्थ्य भी छोटी-मोटी समस्या के चलते सामान्य रहेगा।

तुला- तुला राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह श्रमसाध्य है किन्तु शुभ फल दायक है। इन जातकों कि वृत्ति भौतिक उपभोग की वस्तुएं को क्रय करने की रहेगी। महिलाएं वस्त्राभूषण आदि के क्रय करने की ओर उन्मुख रहेंगी। किसी किसी मौके पर आत्मविश्वास में कुछ कमी का आभास होगा।

वृश्चिक- वृश्चिक राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह आय तथा व्यय का सन्तुलन रखने वाला है। व्ययस्तता अधिक रहेगी। साझेदारी के कार्यों में सावधान रहने की आवश्यकता है। किसी भी प्रकार से मतभेद को टालें। कोई मानसिक कष्ट हो भी तो उसे चेहरे पर न आने दें। परिवार में कोई मांगलिक कार्य संभावित है। इन जातकों का स्वास्थ्य बदतले मौसम में विपरीत रूप से प्रभावित हो सकता है।

धनु- धनु राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह मिले-जुले फल देगा। आय तो होगी किन्तु व्ययाधिक्य भी सम्भावित है। फिर भी निर्वाह योग्य साधन बनते रहेंगे। इस माह का अन्तिम सप्ताह अच्छा जाने की आशा है। घर-परिवार में कोई मांगलिक कार्य होने से खुशी का माहौल रहेगा। मेहमानों के आने से खर्चा तो होगा होगा ही। शत्रु सिर उठाऐंगे परन्तु वे अपनी चालों में ना कामयाम होंगे। समाज में मान-प्रतिष्ठा बने रहेगी।

मकर- मकर राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह लाभ दायक सिद्ध होगा। आय उत्तम तथा खर्चा सीमित होगा। विलास कार्यों पर धन के अपव्यय पर अंकुश लगांए छोटी बड़ी यात्राएं होगी, जिनमें सावधानी रखनी अपेक्षित हैं। व्ययस्तता अधिक रहेगी किन्तु किसी नई योजना का क्रियान्वयन भी हो सकता है। परिवार में किसी-मांगलिक कार्य के होने की सम्भावना है। दाम्पत्य जीवन मधुर रहेगा।

कुम्भ- कुम्भ राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह अवरोधों के चलते लाभ देने वाला है। कुल मिलाकर माह को अनुकूल ही कहा जाएगा। उत्साह बना रहेगा। मित्रों का सहयोग मिलेगा। परिवार में सामन्जस्य बिठाने के लिए प्रयास करने होंगे। शत्रु सिर उठायेगे किन्तु वे अपने मनसूबों में कामयाब नही हो पायेंगे। संतान सम्बन्धी कोई चिन्ता परेशान कर सकती है। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह माह सामान्य है।

मीन- मीन राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह लाभालाभ की स्थिति लिए रहेगा। अवरोधों के चलते निर्वाह योग्य आय के साधन बनते रहेंगे। माह के द्वितीय सप्ताह में कोई शारीरीक कष्ट हो सकता है। शत्रुओं से सावधान रहें। मित्र बनाते समय सोच विचार करें। कोई नया कार्य प्रारम्भ न करें। स्वास्थ्य के प्रति भी सचेत रहे।

-इति शुभम्

समाज की दशा और दिशा पर मनो-मंथन हो

दीपावली पर पूज्य आचार्यश्री का जैन समाज से विनम्र अनुरोध

कार्तिक कृष्णा अमावस्या। महाप्रभु भगवान महावीर का महापरिर्वाण दिवस। पूरे भारतीय समाज तथा विशेषतः जैन समाज के लिए अत्यंत गौरवपूर्ण महोत्सव का दिन। संपूर्ण भारत ही नहीं, समस्त विश्व के जैन मंदिरों में श्रद्धा-सिक्त हृदयों से निर्वाण के लड्डू चढ़ाये जाएंगे। विशेष पूजाएं होंगी। जगमग दीपों की ज्योति से मंदिर-मंदिर ही नहीं, घर-घर रोशनी में नहाने लगेंगे। विशेष प्रवचन-भजनों से पूरा वातावरण भक्ति-गंगा में डूब जाएगा। एक महामानव अर्हत् पुरूष के निर्वाण-दिवस पर अपना हर्ष-उल्लास विविध रूपों में प्रकट होना ही चाहिए। लेकिन मेरा जैन समाज से विनम्र अनुरोध है समाज को कुछ विचारणीय विषयों पर मनो-मंथन भी करना चाहिए।

उनमें पहला विषय है जैन अनुयायियों की घटती हुई आबादी। इतिहास में एक ऐसा भी समय था जब जैन धर्म का व्यापक प्रभाव पूरे देश पर था। धीमे-धीमे वह प्रभाव क्षीण होता गया। हम उस समय के कारणों पर न जाकर बादशाह अकबर के समय को ही लें। बादशाह अकबर का काल केवल चार सौ वर्ष पुराना है। उस समय के उल्लेखों के अनुसार जैनियों की आबादी साढे तीन से चार करोड़ के बीच थी। आज की राष्ट्रीय जन-गणना के अनुसार जैनियों की संख्या मात्र बयांलीस लाख है। जैन समाज इससे सहमत नहीं है। वह अपनी आबादी एक करोड़ के आसपास मानता है। हम एक बार समाज के अनुमान को भी स्वीकार कर लें। फिर भी प्रश्न है चार सौ वर्षों के अंतराल में जैन-आवादी चार करोड से घटकर एक करोड पर क्यों आ गई? क्या यह गंभीरता से विचारणीय विषय नहीं है। और यह भी उस स्थिति में जब लगभग पन्द्रह हजार जीवन-दानी साधु-साध्वियां निरंतर पद-यात्राओं से इस धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए गांव-गांव, शहर-शहर भ्रमण कर रहे हैं। हजारों वर्षों से हजारों साधु-साध्वियां जिस धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए पद-यात्राएं कर रहे हों, उसका प्रभाव तो राष्ट्र-व्यापी हो जाना चाहिए। इसके ठीक विपरीत जब जैन आवादी दिन-दिन कम होती जा रही है तो क्या जैन समाज को इस दिशा में गंभीरता से विचार-मंथन नहीं करना चाहिए?

इसी संदर्भ में आज जैन मुनियों का पद-विहार भी गंभीर चिंतन मांगता है। वास्तविकता यह है आज की ये पद-यात्राएं वाहन-यात्राओं की अपेक्षा अधिक हिंसा और परिग्रहमूलक हैं। स्वयं वाहन में नहीं बैठकर यात्रा-व्यवस्था के नाम पर वाहनों का भरपूर उपयोग, आहार-व्यवस्था के लिए चौके-चूल्हे, धर्म-प्रभावना के नाम पर आडम्बर-प्रदर्शन, व्यक्ति तथा पंथ/संघ-प्रचार के लिए पेम्फलेट-पोस्टर तथा बड़े-बड़े होर्डिंग, ताम-झाम पूर्ण शोभा-यात्राएं आदि पर होने वाले करोड़ों-करोड़ों के खर्च, फिर भी अहिंसा और अपरिग्रह मूलक ये पद-यात्राएं, परंपरा-पीडित सोच का ऐसा उदाहरण दुनियां में दूसरा शायद ही मिले।

इसके साथ ही जैन समाज की पार्टियों में बढता हुआ मांसाहार का प्रचलन भी गंभीर चिंता का विषय है। शाकाहार जैन समाज की प्रतिष्ठा पूर्ण पहचान कभी होती थी। आज दुःख का विषय है वह पहचान जेन समाज आधुनिकता के नाम पर खोता जा रहा है। होटलों में समाज की पार्टियों में तो मांसाहार का प्रचलन बढ ही रहा है। वह धीमे-धीमे घरों में भी घुसने लगा है। बड़े-बड़े आचार्यों के प्रमुख श्रावकों के घरों में शराब-मांस का प्रवेश और भी अधिक चिंता का विषय है। विचारणीय विषय और भी हैं। बढ़ती हुई भ्रूण-हत्याएं, बढते हुए तलाक, विवाह-शादियों में अन्धा वैभव प्रदर्शन आदि। इन समाज-गत समस्याओं पर भी चिंतन होना चाहिए। किंतु जैनों की घटती हुई आबादी, परंपरा-पीडित पद-यात्राएं तथा बढता हुआ मांसाहार शीघ्र गंभीर मनोमंथन मांगता है। मुझे आशा है जैन-समाज इस पर गंभीरता से सोचेगा।

जैन आश्रम, मानव मंदिर परिसर में पूज्य आचार्यश्री रूपचन्द्रजी तथा पूज्या प्रवर्तिनी साध्वीश्री मंजुलाश्री जी के मार्ग-दर्शन में शिक्षा-सेवा की सभी प्रवृत्तियां प्रशंसनीय ढंग से प्रगति पर है। देश-विदेश से श्रद्धालु-जनों का आवागमन निरंतर रहता है। भविष्य के कार्यक्रम आप अगले अंक में पढ़ेंगे।

चुटकुले

1. मोंटी (पापा से) - पापा, आपने जो चमेली का पौधा लगाया था उसे एक सप्ताह हो गया है लेकिन अभी तक जड़ें नहीं निकलीं।
पापा - तुम्हें कैसे पता चला?
मोंटी - मैं उसे रोज उखाड़कर जो देखता हूं।

2. रजनी (राधिका से) - कल, सारी रात मुझे नींद नहीं आई।
राधिका - लेकिन क्यों?
रजनी - मैं सारी रात यही सपना देखती रही कि मैं जाग रही हूं।

3. राजू - तुम्हारे पिताजी दर्जी हैं, फिर भी तुम्हारी कमीज में बटन नहीं हैं।
संजू - तुम्हारे पिताजी डॉक्टर हैं, फिर भी तुम्हारे छोटे भाई के दांत नहीं हैं।

4. अध्यापक ने छात्रों को 5 पन्ने का निबंध लिखने को कहा। निबंध का विषय था, 'आलस्य क्या है।'
भोंदू ने चार पेज खाली छोड़कर पांचवें पेज के अंत में लिखा-
'यही आलस्य है।'

-प्रस्तुति : विनय